नरसिंहराव

सुंदरजी बेटाई

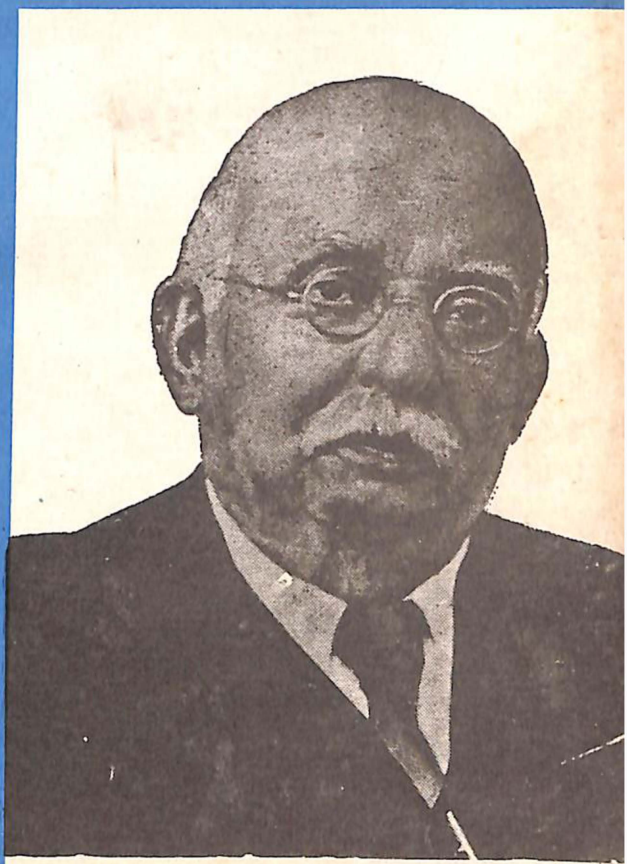

H
891.470 92
N 168 S

भारतीय साहित्य के

H
891.470 92
N168 S

अस्तर पर मूर्तिकला के प्रतिरूप में राजा शुद्धोदन के दरबार का वह दृश्य छपा है, जिसमें तीन भविष्यवक्ता भगवान बुद्ध की माँ - रानी माया के स्वप्न की व्याख्या कर रहें हैं, जिसे नीचे बैठा लिपिक लिपिबद्ध कर रहा है । भारत में लेखन-कला का यह संभवतः सबसे प्राचीन और चित्रलिखित अभिलेख है ।

नागार्जुनकोण्डा : दूसरी सदी ई.
सौजन्य : राष्ट्रीय संग्रहालय, नयी दिल्ली

भारतीय साहित्य के निर्माता

नरसिंहराव

लेखक

सुंदरजी बेटाई

अनुवादिका

सरला जगमोहन

साहित्य अकादेमी

Narasinghrao (नरसिंहराव) :
Hindi Translation by Sarala Jag Mohan of
Sundarji Betai's monograph in Gujarati
Sahitya Akademi, New Delhi (1992), Rs. 15

© साहित्य अकादेमी
प्रथम संस्करण : 1992

H
891.47092
N 168 S

साहित्य अकादेमी

प्रधान कार्यालय
रविंद्र भवन, 35 फ़ीरोज़शाह मार्ग, नयी दिल्ली 110 001

विक्रय विभाग
'स्वाति', मन्दिर मार्ग, नयी दिल्ली 110 001

क्षेत्रीय कार्यालय
172, मुंबई मराठी ग्रंथ संग्रहालय मार्ग, दादर, बंबई 400 014
जीवनतारा, 23A/44 X, डायमंड हार्बर रोड, कलकत्ता 700 053
गुना, 304-305, अन्ना सलाई, तेनामपेठ, मद्रास 600 018
ए. डी. ए. रंगामन्दिरा, 109 जे. सी. रोड, बैंगलोर 560 002

ISBN 81-7201-272-1

116078..
18/11/04
Library IIAS, Shimla
H 891.470 92 N 168 S
00116078

मुद्रक
श्रीपाद ऑफसेट
192/2, शिवकृपा
सदाशिव पेठ
पुणे 411 030

मूल्य : 15 रुपये

विषय सूची

1.	प्रास्ताविक	1
2.	कवि	3
3.	नरसिंहराव का सृजनात्मक गद्यलेखन	17
4.	समीक्षक	29
5.	भाषाविज्ञानी	37
6.	उपसंहार	40
	परिशिष्ट - 1	42
	परिशिष्ट - 2	46
	परिशिष्ट - 3	47

प्रास्ताविक

आधुनिक गुजरात के विकास में अनेक महानुभावों ने स्मरणीय योगदान दिया है । इसमें भी 16वीं शताब्दी के और 20वीं शताब्दी के आरम्भ के धुरंधर साहित्यकारों का योगदान विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है । पंडित युग के उन यशस्वी लेखकों और कवियों में एक नरसिंहराव भोलानाथ थे । उनका जन्म 3 सितम्बर, 1856 में हुआ और 14 जनवरी, 1937 में उन्होंने इस दुनिया से विदाय ली ।

नरसिंहराव को आधुनिक गुजराती साहित्य के भीष्म पितामह माना गया है, जो उचित ही है । जिला कलक्टर होते हुए वे अपने सरकारी कामों में अत्यंत व्यस्त रहते थे । फिर भी वे जीवन भर साहित्य और विद्या को समर्पित रहे, जो एक असाधारण बात थी । उन्होंने जो लिखा और जो सोचा और जो उन्होंने साहित्य तथा भाषा विज्ञान से सम्बन्धित अपने लेखों में व्यक्त किया, उसका बड़ा महत्त्व है । नरसिंहराव ने जो लिखा, वह केवल ऐतिहासिक दृष्टि से ही मूल्यवान नहीं है, बल्कि आधुनिक गुजरात के विकास की दृष्टि से भी वह स्थायी महत्त्व रखता है । चाहे सृजनात्मक लेखन हो या साहित्य-समीक्षा हो, भाषा विज्ञान का अध्ययन हो या अनुवाद भी हो, साहित्य के क्षेत्र में नरसिंहराव का ठोस योगदान रहा है । एक तरह से उन्होंने गुजराती भाषा और साहित्य को प्रौढ़ता प्रदान की और बाद की पीढ़ियों के कवियों और गद्य-लेखकों को प्रेरित और प्रभावित किया ।

नरसिंहराव के पिता थे भोलानाथ साराभाई जिनकी धर्म भावना प्रबल थी और प्रबुद्ध सामाजिक चेतना उनकी विशेषता थी । 16वीं शताब्दी के भारत के संकीर्ण वातावरण में यह असम्भव था कि ऐसी सामाजिक चेतना होते हुए कोई व्यक्ति समाज-सुधारक भी न हो । नरसिंहराव को पिता की संवेदना विरासत में मिली थी और अंततः वे सत्य के उपासक बनकर रह गए ।

नरसिंहराव के पास सहज सौन्दर्य-दृष्टि थी जो सरकारी काम के सिलसिले में वे जहां-जहां गए उन स्थानों के प्राकृतिक सौन्दर्य को लेकर पुष्ट हुई थी । इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि उनकी अनेक कविताएं उनकी इस सौन्दर्यदृष्टि को तथा उनके प्रकृति को प्रतिबिम्बित करती हैं ।

इस प्रकार, नरसिंहराव को जो विशेषताएं विरासत में मिली थीं, और जो उन्होंने

स्वप्रयत्न से प्राप्त की थीं, वे उनके लिए साहित्य में और जीवन में भी 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' की उपासना बनकर रह गईं । उनके जीवन में और कार्यों में विशेषताएं पर्याप्त मात्रा में पाई जाती हैं । इससे इस बात का भी प्रमाण मिलता है कि उच्चारण या वर्णविन्यास जैसी बात में ही नहीं, परन्तु मनुष्य के लिए व्यापक रूप से महत्त्व रखनेवाली बातों में भी वे परिशुद्धता का बड़ा ही आग्रह रखते थे । जैसे साहित्य में वैसे ही सामान्य जीवन-व्यवहार में भी परिशुद्धता उनके जीवन का मार्गदर्शक सिद्धान्त था, जिसमें उष्मापूर्ण भावनाएं मिली हुई थीं ।

नरसिंहराव यदि बहुत बड़े विद्वान थे तो उतने ही बड़े अध्यापक भी थे । अवकाशप्राप्ति के बाद वे बम्बई एल्फ़िन्स्टन कॉलेज में गुजराती के अध्यापक नियुक्त किए गए । सभी विद्यार्थी उनकी विद्वत्ता और स्नेहमयी उष्मा से अत्यन्त प्रभावित थे, हालांकि कई बार उन्हें अपने गुरु के भयंकर प्रकोप का भी अनुभव होता रहता था ।

किसी भी बात को समझने और समझाने के लिए वे अथक प्रयास करते थे और उनके बृहद् ग्रंथ इसका सजीव प्रमाण हैं । हालांकि उनकी कविता हमेशा सिद्धि के चरम बिन्दु तक नहीं पहुंचती हैं, फिर भी मनुष्य और प्रकृति के प्रति उनके मन में जो गहरी संवेदना थी, वह तो उनकी कविता में अवश्य पाई जाती है । उनकी रोजनीशी (डायरी) और जीवन में समय-समय वे जिन व्यक्तियों से मिलते रहे उनके रेखाचित्रों में भी वही पाया जाता है ।

अपने जीवन में नरसिंहराव ने अनेक आघात सहे थे । उनकी प्रिय संतानों और पत्नी ने एक के बाद एक दुनिया से विदाय ली और वे उनकी मृत्यु का शोक मनाने के लिए रह गए । उनके दिल को गहरी चोट पहुंची थी । विशेष रूप से पत्नी की मृत्यु के समय तो पल भर उन्होंने धैर्य खो दिया और बोल उठे : "क्या अच्छा होता अगर किसी ने मुझे गोली मार दी होती ।" परंतु ऐसे आघातों के बीच ईश्वर के प्रति उनकी श्रद्धा अधिक प्रबल होती रही । और उनकी कुछ कविताओं में यह श्रद्धा इतनी प्रबलता से व्यक्त होती है और वे कविताएं इतनी भावप्रधान और मर्मस्पर्शी हैं कि आज भी लोग इन्हें गाते हैं ।

सिद्धान्त के विषय में नरसिंहराव ने कभी कोई समझोता नहीं किया और अपने समकालीनों के साथ विवाद करने में कभी नहीं हिचकिचाए । उनके और उनकी ही तरह अटल आग्रह रखनेवाले विद्वान और कवि बलवंतराय ठाकोर के बीच जो उग्र विवाद हुए, उनसे गुजराती साहित्य के अध्येता भली भांति परिचित हैं । दोनों अपनी-अपनी मान्यताओं पर डटे रहे । परंतु दोनों में से एक के भी मन में कटुता का भाव नहीं रह गया थ । इसके विपरीत, दोनों परस्पर के लिए आदर भाव से सोचते थे।

जीवन के अंतिम दिनों तक नरसिंहराव अपना समय गुजराती साहित्य और भाषा को समृद्ध करने में लगे रहे । वे निस्सन्देह अपने समय की एक महान साहित्यिक घटना के रूप में ही आए थे । उन्होंने न केवल तत्कालीन गुजराती साहित्य पर एक अमिट मुद्रा अंकित कर दी, परन्तु उस पर प्रभाव भी डाला ।

2

कवि

("भाता है इस वाद्य को अधिक करुण गान")

नर्मद और दलपत गुजराती के 16वीं शताब्दी के प्रमुख कवि थे । नरसिंहराव के साहित्य के क्षेत्र में प्रवेश करने पर इन दोनों ने आधुनिक गुजराती कविता के अध्याय का आरम्भ कर दिया था । इन दोनों कवियों की मानसिकता एक दूसरे से बिलकुल ही विपरीत थी, परन्तु उन्होंने अपने-अपने ढंग से विषय और स्वरूप को लेकर गुजराती कविता की कायापलट कर दी थी । फिर भी सही मायने में नर्मद को गुजराती कविता की आधुनिक शैली का आद्य प्रवर्तक कहा जा सकता है ।

कवि नर्मद स्वभाव से रोमान्टिक थे । उन्होंने अंग्रेजी के कवियों की कविताएं पढ़ीं, तो उनकी वैयक्तिक अभिव्यक्ति से वे अत्यन्त प्रभावित हुए । उसी प्रकार उन कवियों के प्रकृतिवर्णन और प्रेम की भावना ने भी उनको मोहित कर दिया । चूंकि आवेग (जोस्सो याने जोश) उनके स्वभाव का लक्षण था इसलिए उन्होंने कविता की आवेग के रूप में व्याख्या की । उसके इस आग्रह के कारण प्रायः चारुता और परिष्करण से उसका ध्यान हट जाता था ।

इसके विपरीत दलपत स्थिर गति से और धीरे-धीरे आगे बढ़ने में विश्वास रखते थे और आवेग को अपने पर हावी नहीं होने देते थे । उनको अंग्रेज़ी भाषा का ज्ञान नहीं था । उनकी कविता में यथातथ्य अभिगम और मन्द गति प्रतिबिम्बित होते थे ।

ये दोनों कवि अपने-अपने ढंग से आधुनिक और दोनों के अपने-अपने गुण थे और सीमाएं भी थीं । इनको लेकर गुजराती कविता को उनके ही लक्षण प्राप्त हो गए और गुजराती कविता का स्वरूप ही बदल गया ।

नरसिंहराव ने नर्मद और दलपत दोनों को देखा । वास्तव में दलपत ने उन्हें शाला में पिंगल पढ़ाया था । अपनी पुस्तक 'स्मरण मुकुर', जिसमें अनेक व्यक्तियों के रोचक रेखाचित्र दिए गए हैं, नरसिंहराव ने 'असाधारण प्रतिभा से सम्पन्न' इन दोनों कवियों को सुयोग्य शब्दों में भावांजलि अर्पित की है ।

कुसुममाला

नर्मद की तरह नरसिंहराव भी उत्सुकता और उत्साह के साथ अंग्रेजी रोमान्टिक

कविता पढ़ा करते थे जो उनके दिल की गरहाइयों को छू जाती थी । वर्ड्ज़वर्थ, कीट्स और शॅली की कविताएं उनकी संवेदना को जगा देती थीं । समय बीतते वे स्वयं ऐसी कविताएं लिखने को उद्यत हुए जिनमें उन कवियों के प्रभाव की मुद्रा पाई जाती थी । इस प्रयास के परिणाम के रूप 1877 में उनका प्रथम कविता-संग्रह 'कुसुममाला' प्रकाशित हुआ ।

'कुसुममाला' की प्रस्तावना में नरसिंहराव ने लिखा :

> गुजराती के विवेकी पाठकों को हमारे देश की कविता से गुणात्मक दृष्टि से हर तरह से भिन्न ऐसी पश्चिम की कविता से परिचित कराने और उन पर उस कविता का प्रभाव डालने के उपयुक्त आदर्श को सामने रखते हुए इस कविता-संग्रह को प्रकाशित किया गया है । शुष्क विवेचना द्वारा नहीं, परंतु दृष्टान्तों द्वारा इस कविता के प्रति उनकी रुचि जगाने के उद्देश्य से इस गीति-काव्य संकलन में प्रयास किया गया है । इस प्रयास को सफलता प्राप्त होगी या नहीं, यह तो अदृश्य दैवी शक्ति के अधीन है ।

यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि उनका यह उद्देश्य प्रायः सफल ही रहा । अपनी छन्दोबद्ध रचनाओं, भाषा सौन्दर्य, भावनाओं के वैविध्य और चिन्तनप्रधन विषय-वस्तु द्वारा उन्होंने गुजराती कविता को ओजस्विता और परिष्करण प्रदान किया । **कुसुममाला** के प्रकाशन से गुजराती कविता को गीति-काव्य की विद्या प्राप्त हुई जिसमें प्रेम और प्रकृतिवर्णन के अंश भी मिले हुए थे ।

उदाहरण के लिए **कुसुममाला** की समर्पण की कविता ही देखी जाए । यह कविता साधु प्रकृति के नारायण हेमचन्द्र के लिए है जिनका नरसिंहराव की कविता पर सौम्य प्रभाव था । शिखरिणी छन्द में लिखी गई यह कविता समृद्ध मनोभाव का एक दृष्टान्त है । उसमें भाषा की सुन्दरता है और एक ऐसा काव्यात्मक गुण है जो पाठक के हृदय को छू जाता है । उस कविता की पंक्तियां हैं :

स्वच्छन्द उठी जो हृदयगिरि से कविता धारा,
बह निकली वह मन्द-मन्द, (फिर) वही तीव्र गति से
रुका अचानक प्रवाह उसका शुष्क अरण्य में,
किए कोटि प्रयास पर न जगीं उसकी लहरें ।

घूम रहा था देशों में अद्‌भुत जादूगर,
आया, देखा सरिता डूबी रन के अन्दर,
किया प्रिय मंत्रोच्चार दंड से कठिन पत्थर पर प्रहार,
और देख लो प्रबल वेग से उछल पड़ा जल-निर्झर ।

बहने लगी सरित कविता की रन में सत्वर,
नहीं सूखी है अब तक - धन्य, तुम्हें हैं वन्दन ।

इस उपकृति का ऋण में साधु उतारूं कैसे ?
सरित-लहरी का अर्घ्य समर्पित करूं तुम्हें में ।

आधुनिक गुजराती कविता में **कुसुममाला** एक सीमा चिह्न है । उसकी नवीनता में कविता के भावकों को आकर्षित किया । उस कविता-संग्रह की प्रशंसा - कभी अतिप्रशंसा भी की गई । तो दूसरी ओर उसकी उतनी ही कड़ी आलोचना भी हुई । एक ओर विरोध के सूर उठे तो दूसरी ओर उस नवीन शैली के अनुकरण भी होने लगे । कुछ भी हो, **कुसुममाला** ने नरसिंहराव को अपने समय के एक महत्त्वपूर्ण कवि के रूप स्थापित कर दिया और इसके साथ ही उन्हें आधुनिक गुजराती कविता के 'पिता' भी माना गया ।

यह शायद ही सम्भव हो कि किसी भी कवि के कविता-संग्रह की सभी कविताएं समान स्तर की हों । इसमें **कुसुममाला** भी अपवाद नहीं है । इस संग्रह में नरसिंहराव की कई सर्वोत्कृष्ट कविताएं हैं तो कई कविताएं सामान्य कोटि की भी कही जा सकती हैं ।

आज के मानदण्ड को लेकर चलें तो सम्भव है कि **कुसुममाला** की कविताएं हमें मुग्ध न कर सकें । परंतु नरसिंहराव के समकालीनों ने उन कविताओं की सराहना की । दलपत और कान्त जैसे कवियों ने तथा नवलराम तथा मणिलाल नभुभाई द्विवेदी जैसे उस समय के प्रतिभावंत लेखकों ने और बृहद् उपन्यास **सरस्वतीचन्द्र** के लेखक गोवर्धनराम त्रिपाठी ने **कुसुममाला** की गुणवत्ता परखी थी ।

गुजरात के अग्रगण्य दार्शनिक और लेखक आचार्य आनन्दशंकर ध्रुव नरसिंहराव के समकालीन थे । उन्होंने नरसिंहराव की प्रकृति-निरूपण की कविताओं की सराहना करते हुए लिखा था : ''नरसिंहराव ने मानवहृदय के कुछ भाव अत्यंत सुन्दर ढंग में व्यक्त किये है । परन्तु प्रकृति के कवि के रूप में वे अधिक विशिष्टता का परिचय देते हैं ।''

कुसुममाला की कुछ ध्यान देने योग्य कविताएं है : ''मेघ'' (शॅली की कविता 'क्लाउड' पर आधारित है), 'चन्दा', 'अभिनन्दन शतक','सहस्रलिंग तलाव' (सहस्रालिंग तालाब), 'दिव्य टहुको' (कोयल की दिव्य कूक),'कालचक्र', 'बहुरूप अनुपम प्रेम धरे' (महान प्रेम के विविध स्वरूप), 'प्रेम सिन्धु', 'फूलनी साथे रमत' (फूल के संग खेल), 'आशा पंखीडुं' (आशा पंखी) 'विधवा-विलाप', 'कर्तव्य अने विकास', 'विपदमां धारण करनार' (दुःख सहनें की शक्ति), 'संस्कार बोधन', 'तारी छवि नथी' (यह तुम्हारी छवि नहीं है), 'उनाळाना एक परोढनुं स्मरण' (ग्रीष्म के एक प्रभात का स्मरण), 'मध्यरात्रिये कोयल' (मध्यरात्रि में कोकिलगान) ।

कुसुममाला से कुछ उद्धरण :

आओ, मधुर फूल, हम मस्ती में खेलें ।
एक दिन रहकर संग खुशी से झूमें ।

मै भी कोमल फूल तुम्हारे जैसा
रहकर मनुजों के संग
कुम्हलाया मेरा वदन
भाग वहां से आया हूं में पास तुम्हारे
कोमल हृदय तुम्हारा है, तुम
अलग न मानो मुझको

नहीं कुटिलता तुममें
न ही क्रूरता का नाम ।
कपट वचन तुमने नहीं जाने,
दिल में भरपूर है प्यार ।

तो आओ, मधुर फूल, हम मस्ती में खेलें,
एक दिन रहकर संग, खुशी से झूमें ।

("फूलनी साथ रमत" से)

इस प्रकार कवि हमें मानव-समुदाय से दूर हटा कर कुछ पलों के लिए फूलों के संग सुखानुभूति का आह्वान करते हैं ।

दूसरी एक कविता में मध्यरात्रि के शांत वातावरण में कोयल की मधुर कूक सुनकर मन में जगती आनन्द-लहरियों का वर्णन है :

सुनो प्रिये, वह कोयल तरुवृन्द में,
गाती है वह लय से ।
शान्त रात्रि में चांदनी चमके,
हलकी बदली भी छा जाए ।

वायु की इस मन्द लहर में
कोयल कूक सुनाए — ओ प्रिये ।

बुला रही तुमको वह, प्रिये,
मधुर को मधुर ही भाए,
तुम भी अपने मधुर कंठ से
कूक सुना दो उत्तर में -- ओ प्रिये !

सुनो वही कूक-स्वर फिर से
मधुर अमीरस लाया है,
कोयल ने तो अपने को
तरुझुंड में छिपाया है — ओ प्रिये !

("मध्यरात्रिये कोयल" से)

नरसिंहराव मानते थे कि सृष्टि के सौन्दर्य का निरूपण कर देना पर्याप्त नहीं है ।

कविता के विषय में एक ऐसी परिकल्पना आवश्यक थी जो हमारे सामने प्रकृति के आंतरिक रूपों को प्रकट कर दे, उसके विविध रूपांतरों को, और उससे अधिक, प्रकृति और मनुष्य के जीवन के, मनुष्य की भावना-सृष्टि के सूक्ष्म सम्बन्धों को हमारे सामने रख दे ।

इन पंक्तियों से नरसिंहराव की इस दृष्टि का उदाहरण पाया जाता है :

वह रही कुमारी सरिता लेकर निर्मल जल,
भाग रही है, दौड़ी-दौड़ी आए इधर,
दुलारती है, पगली, फिर वह लजा रही है,
सब, इस नदी की धारा में ईश की करुणा बहती है ।
प्रीतभरा स्मित बिखेर तुमको आलिंगन में लेती है
बरसाकर वह तुम पर दया, पाटण, तुम्हें जताती है -

चाहे सारी मनुज कृति को समय ही क्यों न बुझा दे,
मेरे प्रेम सरित की बाढ़ पर अखंड बहती जाए,
लुट जाए साग़ा धन, और सारा ही वैभव
कभी नहीं लुट जाएगा मेरा यह झरण

(सहस्रलिंग तलाप कांठा परथी से)

सोने के पिंजड़े में मैने
बन्द किया आशा-पंछी को
वह तो धारण करने लगा
सान्ध्य-मेघ के रंगों को
सुहा रही थी स्वर्ण-मेख-सी
चोंच बहुत जो छोटी थी
और थी उसके सिर की शोभा
इन्द्रधनुष के रंगों से
पर हाय एक दिन वह उड़ चला
तोड़कर सोने का पिंजड़ा
नहीं उसे मैं पकड़ ही पाया
वह तो गाता उड़ता चला
उसके पीछे भाग रहा मैं
नहीं हाथ वह आता है
फिर भी मैं लालच में आकर
दौड़ रहा उसके पीछे ।

('आश पंखीडुं' से)

कवि सृष्टि पर, उसे सजीवता प्रदान करने वाली दिव्य शक्ति पर और सृष्टि के

सृजनहार की महिमा पर मुग्ध हैं । **कुसुममाला** में उनका यह मुग्धता का भाव जगह-जगह दिखाई देता है, हालांकि यह नहीं कहा जा सकता है कि उस भाव को हमेशा काव्यात्मक अभिव्यक्ति दी गई है । फिर भी, **कुसुममाला** की कविताओं में निस्सन्देह नरसिंहराव की काव्य-दृष्टि तथा उनके अभीष्ट उद्देश्य मुखरित होते हैं ।

आज संभवतः ऐसा ही कहा जा सकता है कि नरसिंहराव ने जिस प्रकार प्रकृति के और उसीसे निष्पन्न दार्शनिक चिंतन के अधीन रहकर काव्य-सृजन किया, इससे उनकी कविता की सिद्धि को पूरा-पूरा लाभ नहीं पहुंचा । परंतु ऐतिहासिक दृष्टि से उनकी इस प्रकार की सृजन-प्रक्रिया का अपना ही महत्त्व है । और जब साहित्य के विकास का मूल्यांकन करना हो तो ऐतिसाहिक महत्त्व रखनेवाले मुद्दों को भुलाया नहीं जा सकता है । यही कारण है कि कवि की तीव्र अनुभूति और मनोव्यापारों की अभिव्यक्ति के प्रयास के परिणाम के रूप में **कुसुममाला** एक महत्त्वपूर्ण रचना है ।

हृदयवीणा

नरसिंहराव का दूसरा कविता-संग्रह **हृदयवीणा** नौ साल के बाद 1866 में प्रकाशित हुआ । **कुसुममाला** की ही काव्य-शैली और अभिराम के बावजूद इस दूसरे कविता-संग्रह में कुछ कविताएं बेहतर लगती हैं । यही नहीं, **हृदयवीणा** में शैली की प्रौढ़ता और विषयों का वैविध्य भी पाए जाते हैं ।

जैसा कि पहले बताया गया है, नरसिंहराव प्रकृति-सौन्दर्य के प्रशंसक थे और सरकारी काम के लिए दौरे करते-करते उन्होंने उस सौन्दर्य को आत्मसात् किया था । **हृदयवीणा** में कुछ कविताएं ऐसी हैं जो प्रकृति-सौन्दर्य से प्रेरित चिंतन को अभिव्यक्त करती हैं । बहुधा प्रकृति-सौन्दर्य में उन्हें दिव्यता का दर्शन होता था ।

हृदयवीणा की एक विशेषता यह है कि उसमें कुछ कविताएं नारी के दुर्भाग्य को विषय बनाकर लिखी गई हैं । विधवाओं के बारे में लिखी गई कविताओं की संख्या काफी बड़ी है । 'फशी पड़ेली वालविधवा' (फंसी हुई वालविधवा), 'कारागृहमांनी विधवा' (विधवा कारागृह में), 'ठगाएली विधवा अने तेनुं मांदुं वालक' (ठगी गई विधवा और उसका बीमार बच्चा) उन कविताओं में से उल्लेखनीय हैं ।

परंतु नरसिंहराव की बड़ी भारी प्रशंसा तो उनके 'उत्तरा अने अभिमन्यु' (उत्तरा और अभिमन्यु) तथा 'मत्स्यगन्धा अने शान्तनु' (मत्स्यगन्धा और शान्तनु) जैसे खंडकाव्यों के लिए की गई और इन्हें गुजराती कविता को नरसिंहराव की बड़ी देन माना गया है । गुजराती भाषा में खंडकाव्य की विद्या का प्रयोग सर्व प्रथम कवि कान्त ने किया था और निःशंक नरसिंहराव ने उसे अपना लिया था । फिर भी अपने इन दो खंडकाव्यों में विषय-वस्तु तथा संवेदनशील अभिगम की दृष्टि से नरसिंहराव की अपनी प्रतिभा की मुद्रा अंकित है ।

'गरबी' कविता की वह विधा है जो नारी-गीतों के लय में गाई जाती हैं । नरसिंहराव ने 'गरबी' के रूप में भी कुछ कविताएं लिखीं जो **हृदयवीणा** में शामिल हैं ।

सुरम्य सुर और लय में लिखी गईं ये कविताएं गुजरात में कितने ही वर्षों तक गूंजती रहीं । 'ऊंडी रजनी' (गहन रात्रि) और 'सन्ध्या गानद्वीप' जैसी गरबियां उनके मनोहारी प्रतीकों और संगीतमय शब्दों के कारण अत्यंत चित्ताकर्षक हैं ।

नरसिंहराव के प्रकृति प्रेम को देखते हुए इस बात में कोई आश्चर्य नहीं है कि उनकी कविताओं में सन्ध्या, ऊषा, रात्रि, तारे आदि के उल्लेख विविध प्रकार से बार-वार आते रहते हैं । प्रकृति के सौन्दर्य के प्रति उनकी दृष्टि अनिवार्य रूप से मनुष्य के हृदय की भावनाओं और मनोव्यापारों के साथ जुड़ी हुई है - हालांकि कभी-कभी इन दोनों का सम्बन्ध अवश्य अस्वाभाविक लगता है ।

'प्रकृति रहस्य अने मानव वाळ' (प्रकृति रहस्य और मानव बाल), 'कवि हृदय', 'जलघोघ' (धुआंधार) जैसी कविताओं में प्रकृति के प्रति नरसिंहराव का अभिगम व्यक्त होता है । विशेष रूप से यह 'जलघोघ' कविता में पाया जाता है जिसकी कुछ पंक्तियां इस प्रकार है :

तब चाहे तुम गाते रहना
कुछ शोकगान, हे धुआंधार
मत होना तुम मूक, भले ही
छेड़े हृदयवाद्य गम्भीर तान
भाता है इस वाद्य को
अधिक करुण गान ।

हृदयवीणा में कुछ अत्यंत सरल कविताएं है जिन्हें वाल-कविता भी कहा जा सकता है । लेकिन समग्र रूप से देखा जाए तो लगता है कि नरसिंहराव पृथ्वी और आकाश के वीच फैली हुई रहस्यमय और दिव्य सृष्टि के विविध रूपों से मुग्ध हो जाते हैं जो उनके मन में गम्भीर चिंतन और हृदय की उदात्त भावनाओं को प्रेरित करते हैं । यदि उनके समकालीन मणिलाल नभुभाई द्विवेदी ने **हृदयवीणा** की कड़ी आलोचना की तो उस समय के एक प्रतिष्ठित लेखक और उतने ही प्रतिष्ठित समाज सुधारक रमणभाई नीलकंठ ने उस कविता-संग्रह की मुक्त मन से प्रशंसा की और उसकी गुणवत्ता को उभारा । कुछ भी हो, **हृदयवीणा** को प्रकृति और उसके साथ मनुष्य के प्रति नरसिंहराव की काव्यात्मक प्रतिक्रिया माना गया है । अपनी ही एक कविता में नरसिंहराव ने कहा है : 'कवि हृदय ही तो वीणा है' । कवि द्वारा किया गया यह **हृदयवीणा** का सही वर्णन है ।

नूपुरझंकार

नरसिंहराव का तीसरा कविता-संग्रह **नूपुरझंकार** 1914 में प्रकाशित हुआ । उनकी कवि-प्रतिमा जो कुसुममाला और हृदयवीणा में विभिन्न स्वरूप में व्यक्त हुई थी, वह अव तक परिपक्व हो चुकी थी । निस्सन्देह यह कवितासंग्रह उनके प्रथम दो संग्रहों की अपेक्षा अधिक समृद्ध है । कुछ समीक्षकों का यह भी कहना है कि **नूपुरझंकार** उस समय की रचना है जव नरसिंहराव का व्यक्तित्व विच्छिन्न होने लगा था । परंतु इस

कविता-संग्रह के कुछ उदाहरणों को देखने के बाद पाठकों को विश्वास हो जाएगा कि ऐसा निराशावादी दर्शन बेबुनियाद था ।

यहां कवि प्रकृति का काव्य देवी एक पुख़्त बालक की तरह विवरण करते हैं । 'दिव्य रमकडां' (दिव्य खिलौने) में खिलौने शब्द का टेक के रूप में प्रयोग किया गया है । इस काव्य की कुछ पंक्तियां इस प्रकार हैं :

चुराए किसने खिलौने मेरे ?
रुदन करूं में वार-वार
घबड़ाऊं भयानक नाद से
छिपता हूं गिरि-गह्वर में ।

प्रकृतिमाता : अब रुदन तुम्हें शोभा नहीं देता
वय नहीं रही खेलने खिलौनों से
शिशुवय के सभी खिलौने यहीं पड़े हैं
रंग बदले, रूप नवीन पाए ।

ऐसी काव्यमय पंक्तियां लिखने के बाद नरसिंहराव 'भावना सृष्टि' जैसी चिंतनशील और श्रुतिमधुर कविता की रचना करते हैं । इस कविता-संग्रह में "भारत जननीनी अश्रुमाला" (भारत जननी की अश्रुमाला) जैसी करुण-मधुर भाव से सिंचित कविता भी है । यह उचित ही है कि यह कविता में गीत-संगीत में लीन, निरंतर आकाश की ओर देख रही काव्य देवी की कल्पना की गई है । इस कविता से 'अन्धकार से दृष्टिहीन बने' अपने देशबांधवों के लिए प्रार्थना कर रहे कवि की कोमल छवि उभर आती है और कर्तव्यपालन में आनेवाले अवरोधों को दूर करने के लिए भारतमाता का अश्रु की माला अर्पित करना यह एक हृदयद्रावक कल्पना है ।

एक दूसरी कविता 'उद्‌बोधन' है, जो उपदेशात्मक है । फिर भी कवि की यह नवजीवन की तीव्र इच्छा, यह विश्वास कि, सत्य की ही विजय होगी, सुग्रथित ढंग से दर्शाए गए हैं और वैसे भी एक नियम के तौर पर ऐसा तो नहीं कहा जा सकता है कि उपदेशात्मक होने के ही कारण किसी भी रचना की काव्यात्मकता को अनिवार्यतया क्षति ही पहुंचती हैं ।

सरकारी काम से नरसिंहराव एक बार रत्नागिरी जिले में गए थे जहां एक क़िले के पास एक क़ब्र पर उन्होंने यह समाधि-लेख पढ़ा : 'यहां बम्बई सिविल सर्विस के आर्थर मैलैल की पत्नी मेरी सोफिया (26) और एलेन हैरियर (32 दिन) को दफनाया गया है । 13 नाविकों के साथ सावित्री नदी की बलुआ माठ में एक नाव डूब गई थी ...' यह पढ़कर नरसिंहराव की कवि-संवेदना जाग उठी और उन्होंने 'चित्रविलोपन' खण्डकाव्य की रचना की । 'चित्रविलोपन' नरसिंहराव की अत्यन्त हृदयस्पर्शी और उत्कृष्ट रचनाओं में एक है ।

मानव हृदय के भावों को प्रकृति के साथ जोड़ने की नरसिंहराव की प्रिय शैली का

यह एक प्रभावशाली दृष्टान्त है । पति के घर लौट रही पत्नी की उत्कंठा, सागर की ओर बढ़ रही नदी के तेज़ प्रवाह में वेग से बढ़ रही नाव, सन्ध्या की रंगमयी आभा, झिलमिलाती शुक्रतारिका इन सब को मिला कर कवि ने एक अत्यंत मनोरम चित्र अंकित किया है :

देखो खेल रही उमंग से सन्ध्या
लिए गोद में शुक्रतारा कणिका
देख रही रविनाथ को उत्कंठ नयन से
डूब गया है जो सागर के जल में ।

ओर फिर अचानक भयानक तूफ़ान उठा । सन्ध्या के रंग विलीन हो गए । नाव उलट गई :

आंख झपकते उलट गई वह नाव
लुप्त हो गए मधुर-सुखद वे चित्र
डूबी सन्ध्या जल में शुक्र कणिका के संग
तमिस्र में गाया सागर ने करुण छन्द

इस कविता-संग्रह में अति लोकप्रिय 'गरबी दिव्य आशा' भी है :

स्वर्ग लोक से उतरी हूं में - स्वर्ग में है मेरा निवास,
फूल बिखेरूं स्थान-स्थान पर, मैं हूं दिव्य आशा ।

'विरागिणीनी वीणा' (वैरागिनी की वीणा) में एक ऐसी वैरागिनी नारी के मनोभावों का अत्यन्त हृदयद्रावक वर्णन है जिसे अपने संसार में भारी विपदाओं का सामना करना पड़ा था और मानव जीवन के क्लेश को भुलाने के लिए उसके पास साथी के रूप में केवल उसकी वीणा रह गई थी । श्वेत वस्त्रों में सज्ज उस रूपवती नारी को उस कविता में नदी के किनारे गोद में वीणा लिए चित्रित किया गया है । वह अपनी वीणा को संगीत के सुर छेड़ने के लिए प्यार से आग्रह करती है :

गहराए सागर का पानी, बुदबुद नाचे सरित-प्रवाह
वायु लहर से उठे विभिन्न सुर, बढे वेग से धुआंधार
उन सुरों और रंगों को उतार लो अपने भीतर
भर लो अपने हृदयों को जीवन के गीतों से
और मृत्यु के महासुरों से
गाओ वह भव्य गान, मिलाओ उसमें दिव्य मनोभाव ।

''दीन बालक'' (दीन बालक) में कवि की ईश्वर के प्रति श्रद्धा-भक्ति व्यक्त होती है और कविता की अंतिम पंक्तियों में उनकी सौन्दर्य भावना का भी बोध होता है :

शाश्वत सौन्दर्य की यह छवि
पा लें, फिर नहीं विलीन होगी,

कल्पना की दिव्य सृष्टि है
निर्मित सदा-सदा के लिए

नूपुरझंकार में मृत्यु के विषय को लेकर लिखी गई तीन कविताएं हैं । उनमें से एक सरोजिनी नायडू के संग्रह 'द गोल्डन थ्रेशोल्ड' से 'ए पोयम ओन डेथ ' का अनुवाद है । दूसरी कीट्स की कविता 'टेरर आफ़ डेथ' का अनुवाद है । परंतु तीसरी कविता 'मृत्युनुं मरण' (मृत्यु की मौत) मौलिक है जो 'गरबी' के रूप में लिखी गई है ।

'अग्निहोत्र' कविता, विवाहित स्त्री-पुरुषों को कठिन प्रेम-मार्ग में जिन कर्तव्यों का पालन करना होता हैं, उसके बारे में है । इसी प्रेमाग्निहोत्र का परम उत्कर्ष कवि ने 'तद्गुण' खंण्डकाव्य में दिखाया है जो **बुद्धचरित** संग्रह में है । यह खण्डकाव्य बुद्ध और यशोधरा के बीच संवाद के रूप में लिखा गया है । यशोधरा परिव्राजिका बन चुकी है और बुद्ध उसे निर्वाण की अवस्था में जो परम शांति की प्राप्ति होती है, इसका बोध कराते है :

निर्वाण के सागर में
कभी नहीं आता तूफान,
मिले यदि ऐसा आभास
(तो) समझो है यह कुछ और

'धुवड'(घुग्घू) कविता में नरसिंहराव ने कविहृदय की निराशा की भावना को व्यक्त किया है । उन्होंने स्वयं कहा है कि अपने कॉलेज के दिनों में एक अंग्रेज़ अभिनेता को एडगर एलन पो की रचना "द रेवन" का नाट्य रूपांतर पढ़ते हुए सुनकर उन्हें इस कविता लिखने की प्रेरणा मिली थी । परंतु किसी भी अर्थ में वह "द रेवन" का अनुवाद नहीं है । किंतु मन में यह प्रश्न भी उठ सकता है कि ईश्वर के प्रति इतनी अटल श्रद्धा रखने वाले इस कवि को ऐसी निराशा का अनुभव क्यों हुआ होगा ।

इसके बाद लिखी गई "गूढ़ कोकिला" कविता में इस प्रश्न का उत्तर मिलता है । जब वे दिव्य संगीत सुन पाएंगे तब उन्हें शांति प्राप्त होगी, ऐसी आनन्दमयी आशा की ध्वनि इस कविता से उठती है । शैली की दृष्टि से कदाचित् "धुवड" को "गूढ़ कोकिला" की अपेक्षा बेहतर कहा जा सकता है । परंतु यहां इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि कवि का प्रकृति-प्रेम इतना प्रगाढ़ था कि अंततोगत्वा नैराश्य से उन्हें पराभूत नहीं होने दिया ।

ये और ऐसी अन्य कविताएं छन्दोबद्ध सुरम्य रचनाएं हैं जिनमें नरसिंहराव ने खंड शिखरिणी, खंड हरिगीत और वसन्ततिलका आदि का अत्यंत सानुकूल ढंग से प्रयोग किया है । गुजराती कविता के विकास में नरसिंहराव का यह निस्सन्देह महत्त्वपूर्ण योगदान है ।

"स्वेच्छास्वीकार" एक ऐसा खंडकाव्य है जो 19वें शतक के चित्रकार सर नोयल पेतों का चित्र "द चॉइस" देखने के बाद लिखा गया था । अनिष्ट से मुक्ति पाने की

मनुष्य की क्षमता इस कविता का विषय है । इसका आस्वाद करते समय रसिक पाठक को उपनिषद् के उस श्लोक का अवश्य स्मरण होगा जिसमें 'श्रेय' और प्रेय के बारे में बताया गया है ।

'पुरुरवा अने उर्वशी' (पुरुरवा और उर्वशी) भी संवाद के रूप में लिखी गई कविता है । इस कविता का अपना ही एक आकर्षण है और इन पौराणिक पात्रों के बीच के संवाद द्वारा दोनों की मनोरम छवियां उभर कर सामने आती हैं । इस कविता को **नूपुरझंकार** की सबसे अधिक आनन्ददायक और स्मरणीय कविता भी कहा जा सकता है ।

"अवसान" (मृत्यु) **नूपुरझंकार** की अंतिम कविता है । मृत्यु के मौन को गहरे समुद्र में डूबने की अवस्था के रूप में संतुष्ट से स्वीकार करने के भाव को इसमें हृदयस्पर्शी अभिव्यक्ति दी गई है । इसकी अंतिम दो पंक्तियां इस प्रकार हैं :

पोंछा हो यदि एक अश्रु तुम्हारा मैंने
एक अश्रु की दया-याचना करता हूं मैं ।

न कोई दृढ़ कथन, न कोई दावा - केवल सरल भाव से की गई दयायाचना । और वह भी घमंडी माने जाने वाले कवि द्वारा । अपनी सहज शैली और करुणा की भावना के कारण यह कविता पाठक के मन पर गहरी छाप छोड़ जाती है और कवि की विनम्रता का उसमें संकेत मिलता है ।

बुद्धचरित

गुजराती कविता में बुद्ध के जीवन-प्रसंगों का सशक्त वर्णन करनेवाले प्रथम कवि शायद नरसिंहराव थे । उनकी रचना **बुद्धचरित** का बुद्ध के जीवन की घटनाओं का प्रकाशन 1934 में हुआ । बुद्ध के जीवन की घटनाओं का क्रमानुसार निरूपण इस संग्रह की नौ कविताओं में किया गया है । "तद्गुण" के अतिरिक्त इसमें "किसा गौतमी" और "महाभिनिष्क्रमण" जैसी कविताएं हैं । हालांकि बुद्ध के जीवन के प्रसंग इन कविताओं का विषय है । हर कविता शैली की दृष्टि से भिन्न है । प्रत्येक कविता का अपना आकर्षण है, अपनी सुन्दरता है, विचार-तत्त्व है और पाठक के मन पर चिरस्थायी छाप छोड़ देती है ।

"महाभिनिष्क्रमण" कविता तो अपने आप में एक अनोखी रचना है । उनके शांतिप्रेरक भाव और परिशुद्ध लय को लेकर इस कविता का अद्भुत प्रभाव पड़ता है । गृहत्याग कर रहे बुद्ध का वर्णन इस प्रकार किया गया है :

'चला, वह श्याम रात्रि में चला
अनुपम ज्योति-पथ पर चला' ।

ये पंक्तियां गुजराती कविता के भावकों को सदा प्रभावित करती रही हैं । अत्यंत सरलता से बुद्ध के जीवन के महत्त्वपूर्ण प्रसंगों का इस संग्रह की कविताओं में निरूपण किया गया है और उनका सौन्दयपरक प्रभाव पड़ा है ।

यह सही है कि नरसिंहराव सर एडविन अर्नाल्ड की रचना "द लाइट ऑफ एशिया" से प्रेरित हुए थे और अंत में उन्होंने बुद्ध के जीवन के कुछ प्रसंगों को लेकर ये कविताएं लिखी थीं । यह भी स्मरण में रहना चाहिए कि नरसिंहराव अश्वघोष की रचना से भी अपरिचित नहीं थे ।

बुद्धचरित की कविताओं में "बुद्धनुं गृहागमन" (बुद्ध का गृहागमन) मौलिक है । शेष सात रचनाएं "द लाइट आफ एशिया" में निरूपित घटनाओं के अनुवाद हैं । परंतु कवि ने जिन घटनाओं को पसन्द किया इससे उनके निजी अनुभव का तथा एक अनुवादक के रूप में उनकी क्षमता का परिचय मिलता है ।

स्मरणसंहिता

स्मरणसंहिता (1915) शायद नरसिंहराव का सर्वश्रेष्ठ काव्य-सृजन है । अपने प्रिय पुत्र नलिनकान्त की अकालिक मृत्यु के समय वे यह शोकगीत लिखने को प्रेरित हुए थे । नलिनकान्त केवल उनका पुत्र ही नहीं, मित्र भी था । नरसिंहराव के पहले भी, अनुपयुक्त ढंग से ही सही, एक काव्य-प्रकार के रूप में शोकगीत लिखे तो गए थे, परंतु परिपक्व शैली और हृदयस्पर्शी करुण-मधुर गुण को लेकर **स्मरणसंहिता** गुजराती को इस प्रकार की प्रथम रचना बन गई । प्रामाणिक मनोभाव, जीवन और मृत्यु के सम्बन्ध में सरल और मर्मस्पर्शी चिंतन, उसकी संरचना में स्वाभाविक लगनेवाला सूक्ष्म सौन्दर्यपूर्ण विभेदन, संक्षेप में, अपनी सुन्दरता और निहित एकत्व से इस रचना को अद्‌भुत गरिमा प्राप्त होती है । खंड हरिगीत का प्रयोग उसे और भी प्रभावशाली बना देता है, हालांकि अन्य छन्दों का भी अत्यन्त औचित्यपूर्ण प्रयोग किया गया है ।

"मंगल मन्दिर खोलो" एक ऐसी हृदयद्रावक कविता है जो आज भी गुजरात में प्रियजनों की मृत्यु का शोक मनाने वाले परिवारों में और शोक समाओं में गम्भीर भाव से गाई जाती है । इस कविता की पंक्तियां इस प्रकार है :

मंगल मन्दिर खोलो
मंगल मन्दिर खोलो, दयामय, मंगल मन्दिर खोलो ।
पार किया अति वेग से जीवन-वन
शिशु भोला अब खड़ा तुम्हारे द्वार पर
मिटा तिमिर, प्रकाशित ज्योति
अब शिशु को उर में लो... दयामय
रटा निरंतर तुम्हारा नाम मधुर
अब तो शिशु से प्रेम वचन तुम बोलो ... दयामय
दिव्य तृषातुर आया बालक
उस पर प्रेमामृत बरसाओ... दयामय

इस कविता में करुण, भव्य और भक्ति भाव के तत्त्वों का सुगम मिलन होता है । कवि अपने पुत्र की मृत्यु के कारण टूट चुके हैं, फिर भी वे लिखते हैं :

'दिव्य वैद्य ने दिया मुझे है जो भी
मेरे ही हित में
शांत भाव से क्यों न उसे मैं ले लूं
कितना ही कटु हो ।'

उन्हें यह ज्ञात होता है कि मृत्यु तो शाश्वत जीवन का ही दूसरा नाम है । इसीलिए अपने शोक को उर्ध्व बिन्दु पर ले जाकर वे लिखते हैं :

समझेगा जब तात्पर्य मृत्यु का मानव
देखेगा नवजीवन का खुलता द्वार
तभी प्राप्त होगा उसको
आनन्द अपरम्पार ।

महान विद्वान और कविता के भावक आचार्य आनंदशंकर ध्रुव ने **स्मरणसंहिता** का पुरोवचन लिखा और टिप्पणी भी लिखी । **स्मरणसंहिता** की उन्होंने कीट्स के 'इन मेमोरियम' के साथ तुलना की । इसी से इस रचना के काव्यात्मक गुण का पता लग जाता है । 'ज्ञानगिरि के शृंगों को रंगने वाली भक्ति की किरणों' को नरसिंहराव ने जैसा देखा, वैसी **स्मरणसंहिता** में वे प्रतिबिम्बित होती हैं ।

अनुवादक-कवि

कुछ लोगों ने नरसिंहराव को अनुवादक-कवि बताकर नीचा दिखाया है । यह सही है कि अनुवाद नरसिंहराव के काव्य-सृजन का बहुत बडा हिस्सा है, किन्तु उन्होंने अनुवाद की कला को इस हद तक आगे बढ़ाया कि उनके अनुवाद मौलिक गुजराती रचना जैसे ही लगते हैं । गांधीजी के आदेश से उन्होंने कार्डिनल न्यूमैन की कविता "लीड काईंड्ली लाइट" का अनुवाद किया । और फिर शेली की "स्कायलार्क" कविता को भी अनूदित किया । ये अनुवाद नरसिंहराव की अनुवादक्षमता के दृष्टान्त हैं ।

नरसिंहराव नवीनता के प्रवर्तक थे । उन्होंने गुजराती कविता को नए विषय दिए और नवीन रंग भी दिया । कविता में शब्दों के लय और माधुर्य की वे बड़ी प्रशंसा करते थे । गुजराती कविता का अध्ययन करने वालों को नरसिंहराव की कविताओं में गम्भीर और मननशील भावों के साथ ये लक्षण भी देखने को मिलेंगे ।

नरसिंहराव जब 75 वर्ष के हुए तो उनके दो विद्यार्थी 'मित्रावरुणौ' (भानुशंकर व्यास और सुन्दरजी बेटाई) ने उनको भावांजलि अर्पित की । इसके उत्तर में निवृत्ति के भाव से नरसिंहराव ने कहा :

कुसुम तो हो चुके हैं म्लान,
वीणा के टूट चुके हैं तार,
नूपुर की मधुर झंकार भी
अब खोखली बनकर रही ।

अपने जीवन की उस अवस्था में कवि के लिए इस प्रकार निराशा के साथ उत्तर

देना स्वाभाविक था । परंतु यह नरसिंहराव का गुजराती कविता के क्षेत्र में जो स्थान है, इसका तो कोई द्योतक नहीं है - क्योंकि उनकी कविता-माला **(कुसुममाला)** के बहुत-से फूल अभी म्लान नहीं हुए हैं । उनकी वीणा **(हृदयवीणा)** के सभी तार टूटे नहीं हैं । और न ही नूपुर की झंकार **(नूपुर झंकार)** की ध्वनि खोखली हुई है ।

3

नरसिंहराव का सृजनात्मक गद्यलेखन

(काव्यं गद्यं च पद्यं च)

नर्मद ने गुजराती में सृजनात्मक गद्यलेखन का मार्ग प्रशस्त किया । उसके समकालीन नवलराम त्रिवेदी जैसे अन्य लेखकों ने गुजराती गद्य को काफ़ी आगे बढ़ाया । परंतु गुजराती गद्य में सुन्दरता और गम्भीरता के अंश तो नरसिंहराव के गद्य लेखन के साथ ही आए ।

नरसिंहराव के गद्यलेखन को स्पष्ट रूप से दो भागों में बांटा जा सकता है : सृजनात्मक निबन्ध और समीक्षात्मक गद्यलेखन ।

स्मरणमुकुर और **विवर्त लीला** ने गुजराती निबन्ध को सृजनात्मक स्वरूप दे दिया । **स्मरणमुकुर** का प्रकाशन 1926 में हुआ । इस पुस्तक में 'मेरे शैशवकाल से आज तक' वे जिनके परिचय में आए थे और 'जिन्होंने गत 50 वर्षों से गुजरात की छाप मेरे मन पर अंकित की है' उनके रेखाचित्र हैं । इन रेखाचित्रों के लिए पूर्णतया अपनी स्मृति पर निर्भर न रहकर उन्होंने अपनी रोजनीशी (डायरी) का भी आधार लिया था । उन व्यक्तियों के रेखाचित्रों के साथ-साथ नरसिंहराव ने संक्रांतिकाल के गुजरात की सांस्कृतिक भूमिका भी दी हुई है ।

विवर्तलीला

विवर्तलीला का प्रकाशन 1932 में हुआ । मूलतः इसमें संकलित किए गए 16 निबन्ध आचार्य आनन्दशंकर ध्रुव द्वारा सम्पादित प्रतिष्ठित पत्रिका **'वसन्त'** में प्रकट हुए थे । ये निबन्ध नरसिंहराव ने 'ज्ञानबाल' के उपनाम से लिखे थे । इस पुस्तक की प्रस्तावना में नरसिंहराव ने कालिदास की दो पंक्तियां उद्धृत की हैं :

'न सन्तः श्रोतृमर्हन्ति सदसद्व्यक्तिहेतवः ।
हेम्नः संलक्ष्यतेह्यग्नौ विशुद्धिः श्यामिकापि वा ।।

इसके बाद उन्होंने विद्वानों को यह समझने का प्रयास किया कि ऐसे निबन्ध गुजराती भाषा में पहले नहीं लिखे गए हैं । इससे यह मालूम होता है कि निश्णातों के अभिप्राय को महत्व देने की विनम्रता भी उनमें थी । साथ ही वे अपने प्रभावों को जो महत्त्व देते थे, इसका भी यह द्योतक था ।

हालांकि लेखक ने यह स्पष्ट कहा है कि **विवर्त लीला** में उन्होंने समस्याओं को 'दार्शनिक रूप में सामने लाने का प्रयास नहीं' किया है, और यह भी कहा है कि उन्होंने 'गहराई से मनन किए बिना या इनके बारें में विस्तार से अध्ययन किए बिना उन समस्याओं को अकस्मात् ही उल्लेख किया है, फिर भी इन निबन्धों द्वारा उन्होंने इस विधा को विकसित किया । इन निबन्धों में कहीं भी ऐसा आभास नहीं मिलता है कि वे नौसिखिए द्वारा लिखे गए हैं । लगता है कि 'ज्ञानवाल' परिपक्व गद्यलेखक हो गये थे ।

विवर्तलीला के आरम्भ में भवभूति का विख्यात उद्धरण 'एको रसः करुण एव' दिया गया है । और पुस्तक के अंत में नरसिंहराव का मर्मस्पर्शी कथन है : 'में केवल महाशांति की आशा को लेकर जी रहा हूं । इन शब्दों में ईश्वर के प्रति उनकी श्रध्दा भी व्यक्त होती है । पुस्तक के अंतिम शब्द हैं 'ओम् शांतिः शांतिः शांतिः ।'

विवर्तलीला में विविध विषयों पर रोचक ढंग से लिखे गए निबन्ध हैं । लेखक ने समृध्द भक्तिगीतों से तथा गीता और उपनिषदों से अनेक परंतु आवश्यकता के अनुसार ही उद्धरण लिए हैं । अंग्रेज़ी की पुस्तकों और कविताओं से भी बहुत से उद्धरण लिए हैं । परन्तु इन निवन्धों में पांडित्व का अनावश्यक आडम्बर नहीं है । इस संकलन में एक हास्यजनक रेखाचित्र और 'देखत भूली' खेल, (स्मरणशक्ति की कसौटी करनेवाला एक खेल), का वर्णन भी है जो उन्होंने एल्फिन्सटन कालेज में अपने पूर्व-स्नातक विद्यार्थियों के सामने खेलकर दिखाया था । साथ ही उसमें गम्भीर और रोचक ऐसे अनेक दृष्टांत हैं, जो इस पुस्तक के शीर्षक के अनुरूप हैं । इसमें कवि कान्त के प्रसिद्ध खंडकाव्य 'चक्रवाकमिथुन' के बारें में एक व्यंग्यात्मक लेख हैं । और एक अन्य लेख में प्रौढ़ और अनुभवी कवि-समीक्षक बलवंतराय ठाकोर के बारें में अत्यन्त कठोर शब्दों में लिखा है । उसमें 'बेनाम स्टेशन' शीर्षक के साथ लिखी गई मार्मिक कहानी है तथा कविता, संगीत और चित्रकला के विषयों पर चिंतनात्मक लेख हैं । इन सब के बाद यह कैसे हो सकता है कि उसमें दार्शनिक विषयों पर लिखे गए कुछ लेख भी न हों ? सब कुछ सुस्पष्ट ढंग से लिखा गया है और कहीं भी निरुद्देश्य चर्चा नहीं की गई है । जीवन के विभिन्न रूपांतरों के बारें में 'ज्ञानवाल' के अवलोकन मनमोहक और साथ ही गम्भीर भी हैं ।

इस प्रकार का गद्य-संकलन गुजराती भाषा में प्रथम और एकमात्र संकलन ही रह गया है । हां, गुजरात के एक दूसरे महान विद्वान तथा समीक्षक रामनारायण पाठक द्वारा बहुत वर्षों के बाद लिखी गई पुस्तक **स्वैरविहार** भी निबन्धों का संकलन है । परन्तु **स्वैरविहार** के निबन्ध बिलकुल ही भिन्न प्रकार के हैं ।

नरसिंहराव की गद्य-शैली और विषयों का उनके द्वारा किया गया निरूपण उनके वैशिष्ट्यपूर्ण व्यक्तित्व को प्रतिबिम्बित करते है । **विवर्तलीला** के कुछ अवतरणों से यह स्पष्ट होगा । बलवन्तराय ठाकोर के कान्त कवि की कविता चक्रवाकमिथुन के बारे में एक विनोदपूर्ण लेख में दी गई दलील के विरोध में लिखे गए निबन्ध में से एक उद्धरण से कविता के विषय में नरसिंहराव के विचार स्पष्ट होते हैं :

तो क्या कविता धूर्त है और इन्द्रजाल फैलाने वाली है ?

क्या कविता द्वारा प्राप्त होने वाले दिव्य लोचन वास्तव में असत्य माया को प्रकट करेंगे ? कवितादेवी का हस्त मस्तक से उठ जाने पर क्या सत्य की प्रतीति होगी ? यदि ऐसा है तो सूक्ष्म प्रवेश द्वारा सत्य का दर्शन करनेवाली और अलौकिक शक्ति द्वारा उसका प्रदर्शन करने वाली कविता को धूर्त ठहराकर और उसकी फजीहत करके उसे रसिक तत्त्वदर्शन के प्रदेश से निकाल फेंकना चाहिए ।

इस उग्र टिप्पणी से नरसिंहराव के स्वभाव की लाक्षणिकता प्रकट होती है कि उनको सत्य प्रतीत होता था उसे वे निर्भीकता से बता देते थे ।

विवर्तलीला में अन्यत्र नरसिंहराव वाणी और मौन की तुलना करते हैं और दोनों का महत्त्व समझाते हैं । इस काव्यात्मक गुण के विषय में वे अपने विचार इस प्रकार व्यक्त करते हैं :

वाणी मौन विचारों को दर्शाने का समर्थ साधन है, फिर भी वह असमर्थ साधन है । 'यतो वाचो निवर्तन्ते' यह जैसे परमात्मा के स्वरूप के लिए, वैसे ही उच्च परम सत्य के लिए, मानव हृदय के गहन मंथनों के लिए, हृदय के भावों के लिए, गम्भीर चिंतन के लिए, उतनी ही मात्रा में नहीं परंतु उसी प्रकार सही है । सर्वोच्च कवित्व की गति जिस वाणी का प्रयोग करती है, उसके दो स्वरूप हैं - एक सामर्थ्य रूप और दूसरा असामर्थ्य रूप और उसकी असमर्थता में ही उसका सामर्थ्य और सौन्दर्यशक्ति निहित हैं । कविता की वाणी जो व्यक्त करती है, उसकी अपेक्षा जो अव्यक्त रह जाता है, उसके द्वारा अधिक अर्थ दर्शाती है । Silence is more eloquent than speech, इस कथन की यथार्थता इस प्रकार पाई जाएगी ... कविता के मौन के अविरिक्त एक और भी मौन है जो अधिक सबल है : संगीत का मौन ... वाणी और मौन के बीच जो सम्बन्ध है, वही सम्बन्ध कविता और संगीत के बीच है । गणित की संज्ञा का प्रयोग करते हुए यह इस प्रकार दर्शाया जा सकता है : कविता ... संगीत ... वाणी ... मौन ...

वाणी का सामर्थ्य जहां रूक जाता है, वहां से कविता का क्रम आरम्भ होता है और उसकी पराकाष्ठा अनुक्त सूचनों द्वारा आती है । वही है कविता की व्यंजनशक्ति ।

ध्वनि और स्वरूप की दृष्टि से नरसिंहराव की कविता सम्बन्धी धारणा अत्यन्त स्पष्ट थी । उन्होंने लिखा है :

अंतिम संयोगीकरण के बाद ओमूकार का महानाद अथवा श्वेत किरण की अखंड ज्योति को चाहे लक्ष्य माना जाए, वह महा अष्टसिद्धि तो

> योगियों के लिए ही है । मैं तो उपाधियुक्त रूपलीला, नादलीला और प्रेमलीला को स्वीकार करने को तैयार हूँ । परमात्मा के शून्याकार में स्वरसौन्दर्य या रूप सौन्दर्य की सृष्टि की व्यष्टि के रूप में घटना कहां मिलेगी ? उससे सम्बन्धित सौन्दर्य द्वारा प्रकट होने वाली रूपलीला और नादलीला मेरे लिए कविता है ...

नरसिंहराव को पूर्ण विश्वास था कि एक सर्जक को अनिवार्यतया अपने सृजन के प्रति प्रीति होनी चाहिए । ऐसी प्रीति होगी तभी उसके सृजन में सुन्दरता का अविर्भाव हो सकता है । उन्होंने लिखा है :

> इस अखिल ब्रम्हांड के सौन्दर्य की ओर देखें । सुन्दर कृति का रचयिता गेलेटिया की मूर्ति के शिल्पी की तरह अपनी माया रचना के प्रति प्रेम-मोह से बद्ध हो जाए तो उसमें आश्चर्य नहीं हैं । वह महान शिल्पी तो निरन्तर घटनाओं का निर्माण किए ही जाता है और प्रेम के बन्धन में बंधा रहता है । इसीलिए ब्रह्मांड की घटना में से अविच्छिन्न सौन्दर्य बहता हुआ दिखाई देता है । कलाविघायक के विरोध में अपने विधान और विधि के प्रति यदि प्रेमभाव न हो तो उसके कलाविधान में कुछ अपूर्णता ही रह जाएगी ।

सृष्टि के इस सौन्दर्यपूर्ण चमत्कार के सर्जक के प्रति नरसिंहाराव की अडिग श्रद्धा उनके जीवन में अनेक बार देखने को मिलती है । ऐसी श्रद्धा उनके लिए आनन्द का विषय है । वे कहते हैं : "यह श्रद्धा पाने के लिए, इस श्रद्धा में डटे रहने के लिए मैं निरंतर बाल्यावस्था को स्वीकार करता हूँ । इसे आनन्द के साथ स्वीकार करता हूँ ।" वे यह भी कहते हैं :

> इसके लिए कविता लिखने की, कवि होने की आवश्यकता नहीं है, केवल कवि का हृदय हो, यही पर्याप्त है । शिशु के संग शिशु, बाल के संग बाल, मुग्ध के संग मुग्ध बनने की कला मुझे प्राप्त हुई है - कला नहीं, निसर्गसिद्ध शक्ति । इसीलिए कुछ लोग मुझे जब वृद्धबाल कहते हैं तो यह प्रशंसा है या निन्दा - व्यंग है इसकी परवाह किए बिना मैं सुख मार्ग पर प्रयाण करता रहता हूँ ।

'ज्ञानबाल' को पूर्ण विश्वास था कि वे संगीत की शक्ति का अनुभव कर रहे थे । उन्होंने कहा :

> मुझे संगीत की इस अलौकिक शक्ति में बडी श्रद्धा है । मलिन संसार के रागद्वेष, हर्षशोक ... उसके अति कर्कश नाद को विलुप्त करने का सामर्थ्य इस संगीत-शक्ति में है । मैं नहीं जानता ऐसा क्यों है, न ही मैं यह जानना चाहता हूँ कि यह संगीत जो इस लोक में उत्पन्न होता है, फिर भी कहीं वह परजीवन की दीप्ति का दर्शन कराने का सामर्थ्य रखता है ।

नरसिंहाराव 'ज्ञानबाल' ने निबन्ध लेखन की कला को किस हद तक आगे बढाया इसका इन उद्धरणों से पता चलता है । उनके विचार तथा अभिरूचियों की व्यापकता भी इन उद्धरणों से देखी जा सकती है ।

नरसिंहाराव की डायरी

नरसिंहाराव ने 1862 से 1935 तक नियमित रूप से डायरी लिखी थी । 1927-28 में लिखे गए डायरी के पृष्ठ उपलब्ध नहीं हैं । परन्तु इन्हें छोड़ कर गुजरात के प्रसिद्ध साहित्यकार धनसुखलाल महेता और रामप्रसाद बक्षी ने उनकी डायरी के शेष सभी पृष्ठों को एकत्र करके सम्पादित किया है । लेखक के मृत्यु के बहुत वर्षों के बाद 1953 में उस डायरी का प्रकाशन हुआ । नरसिंहाराव के जीवन और विचार तथा सामाजिक महत्त्व के अन्य लेखन में जिस प्रामाणिकता और स्पष्टवादिता का परिचय मिलता है, वे उनकी डायरी में अधिक मात्रा में देखने को मिलती है । आत्मकथा या जीवनी लिखने के लिए सम्पूर्ण सामग्री उसमें प्राप्त है । यह बात और है कि वे स्वयं अपने जीवन को इसके लिए अति सामान्य समझते थे । एक बार अपनी डायरी में उन्होंने लिखा था : 'मेरे जीवन की कहानी ! मेरा जीवन क्या है ? कुछ भी तो नहीं ।' यह उनका प्रामाणिक विचार था परन्तु गुजरात के लिए उनका जीवन निरर्थक नहीं है - क्योंकि एक साहित्यकार और सांसारिक व्यक्ति के रूप में नरसिंहाराव के जीवन में ऐसा बहुत कुछ है जो जानने और याद रखने योग्य है । उस दृष्टि से देखें तो उनकी डायरी को सृजनात्मक गद्य कृतियों के साथ रखा जाता है या नहीं, इसका कोई महत्त्व नहीं है । परन्तु यदि आत्मकथा को सृजनात्मक लेखन कहा जाता है तो इस प्रकार के लेखन को भी सृजनात्मक कहा जा सकता है ।

आनेवाली पीढ़ियों के आनन्द के लिए उस डायरी के पृष्ठों में जाने कितने लोगों का, व्यक्तिगत और अन्य कितनी ही घटनाओं का उल्लेख किया गया है । इन सब विवरणों में नरसिंहाराव का संगीत और चित्रकला के प्रति जो प्रेम था, वह भी प्रतिबिम्बित होता है । अनेक शोकपूर्ण और सुखमय प्रसंगों के उल्लेख द्वारा उनकी धर्मप्रियता और ईश्वर के प्रति श्रद्धा भी व्यक्त होती है ।

हालांकि कुछ लोग नरसिंहाराव को अहंकारी बुद्धिजीवी समझते थे, उनका मानवप्रेम ऐसा था कि उन्होंने उच्च और निम्नस्तर के व्यक्तियों में कभी भेद नहीं किया । अपने जूतों की मरम्मत करनेवाले मोची से लेकर गांधीजी तक अनेक व्यक्तियों का उन्होंने उल्लेख किया है । पहले वे गांधीजी को मि. गांधी और राजनैतिक आन्दोलनकार कहा करते थे, परन्तु बाद में उनका महात्मा के रूप में आदर करने लगे थे । 1931 में नरसिंहाराव भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस के करांची अधिवेशन में जाते समय एक श्लोक लिख कर गांधीजी का अभिनन्दन किया जो भगवद्गीता के एक अत्यंत लोकप्रिय श्लोक पर आधारित था :

यत्र योगेश्वरो गांधी वल्लभश्च धुरन्धरः ।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ।।

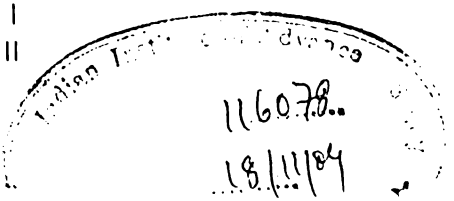

यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि ऐसी आधारभूत डायरी गुजराती भाषा में एक अनोखी घटना थी ।

रेखाचित्र

स्मरणमुकुर नरसिंहाराव का गुजराती साहित्य में एक ओर योगदान है । उसमें उस समय के गुजरात के पाँच या छः दशकों के इतिहास का पुनः सर्जन करने के उद्देश्य से महत्त्वपूर्ण और रोचक विशिष्ट व्यक्तियों के रेखाचित्र दिए गए हैं । 1926 में इस कृति का प्रकाशन होने तक गुजरात के पाठक इस प्रकार के लेखन से अपरिचित थे । इसीलिए **स्मरणमुकुर** के सम्बन्ध में विभिन्न प्रतिक्रियाएँ अनिवार्य थीं ।

कन्हैयालाल माणेकलाल मुनशी द्वारा सम्पादित **गुजरात** मासिक पत्रिका के आरम्भ के साथ ही **स्मरणमुकुर** का भी आरम्भ हुआ । सम्पादक के अनुरोध से स्मरणमुकुर के रेखाचित्र सर्व प्रथम इसी पत्रिका में प्रकाशित हुए । इन रेखाचित्रों द्वारा किसी भी वर्ग को चोट पहुँचाने का नरसिंहराव का उद्देश्य नहीं था । कुछ लोगों ने नरसिंहराव को अहंकारी समझा । फिर भी अनेक लोगों को ऐसा भी लगा कि नरसिंहराव ने उन व्यक्तियों और समाज के कुछ वर्गों का सुचारु और लाक्षणिक ढंग से चित्रण किया था ।

इस प्रकार का लेखन अनिवार्यतया व्यक्तिपरक होता है, इसलिए हमेशा इस बात की आवश्यकता रह जाती है कि जाने-अनजाने किसी असत्य को मन में छुपाए रखने या उसके बचाव के भय के सामने सावधानी बरती जाए । नरसिंहराव ने इस विषय में हमेशा सजग रहने का प्रयास किया । इस सतर्कता के कारण ही **स्मरणमुकुर** एक मूल्यवान रचना बनकर रह गई है जिसमें गुजरात के विभिन्न व्यक्तियों का ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में परिचय कराया गया है ।

स्मरणमुकुर की प्रस्तावना में नरसिंहराव ने गुजरात के 17वें शतक के संत कवि अखो से एक अवतरण दिया है यह उचित है : इस मुकुर में रूप की अनंत संसृति दिखाई देती है । इन शब्दों से यह सूचित होता है कि इन निबन्धों की शृंखला में सौन्दर्य अपने अनेक रूपों में प्रकट होता है । और **स्मरणमुकुर** में यदि व्यक्तियों का और उनके समय की परिस्थितियों का निरूपण है तो इसमें स्वयं लेखक की भी छबि उभरती है, जो अनिवार्य ही है ।

नरसिंहराव ने अपनी प्रस्तावना में यह चेतावनी दी है कि "कुछ चित्र उनके दूर के सन्दर्भ को लेकर चाहे धुंधले लगेंगे, पर कुछ तो अंशतः स्पष्ट दिखाई देंगे ही, जबकि कुछ चित्र तो बिलकुल ही स्पष्ट और सुरेख नज़र आएंगे ।"

स्मरणमुकुर की प्रस्तावना में 'माता' का उल्लेख है जो उनको जन्म देनेवाली माता नहीं है । न ही वह किसी अन्य नारी का चित्रण है । वास्तव में वह उस व्यक्ति का रसमय और विनोदपूर्ण चित्रण है जो परिवार के बच्चों की देखभाल किया करता था ।

इसके तुरंत ही बाद में वे अपनी वास्तविक माता का चित्रण करते हैं जो उन्हें छह साल का छोड़ कर दिव्यधाम की ओर प्रयाण कर गई थीं ।

माता को वे उससे पक्षपात होने से बचा कर सही मार्ग पर लानेवाली ''ईश्वर-कृपा'' के रूप में देखते थें जो उनके सलग जीवन में व्याप्त हो गई थीं । अपनी ''मम्मा'' उनकी दिव्य देश की निवास करने वाली जगज्जननी लगती हैं ।

'माता' के इस संक्षिप्त, मधुर और मनोहारी चित्रण के बाद **स्मरणमुकुर** का सचमुच आरम्भ होता है । यह स्वाभाविक ही है कि पिता भोलानाथ अपने विशाल मित्रवृन्द के साथ उनके स्मरणपट पर कौंध जाते हैं । अपने पिता को नरसिंहराव उनके समय के गुजरात की सांस्कृतिक के अग्रिम व्यक्तियों में एक बताते हैं । भोलानाथ की धर्मप्रीति गहन थी और वे एक समर्पित समाजसुधारक थे ।

भोलानाथ के साथ-साथ अनिवार्यतया रणछोड़लाल छोटालाल और महीपतराम रूपराम जैसे उनके निकट के साथियों का भी उल्लेख है जो उनकी ही तरह धार्मिक सुधार में लगे हुए थे । रणछोडलाल तो बचपन से ही भोलानाथ के मित्र थे । वे धर्मसभाओं में इतने ऊंचे स्वर में दलीलें करते थे कि वहां से गुजरने वालों के कानों को उनका स्वर बींध देता था । और महीपतराम प्रार्थना समाज आन्दोलन के आरम्भ से ही सदा उनके साथ रहे थे और भोलानाथ के विश्वस्त सहयोगी थे ।

इन तीनों ने मिलकर गुजरात में धार्मिक और सामाजिक सुधार को बहुत ही बढ़ावा दिया था । भोलानाथ और महीपतराम ने आरम्भ के वर्षों के अपने क्रोध के दैत्य को पराभूत करने के बाद स्वस्थता प्राप्त कर ली थी । महीपतराम शायद व्यावहारिक सोच-विचार को अपना लेने के बाद सौम्य बन गए थे ।

महीपतराम के बारे में प्रशंसा और आदर के साथ बात करते हुए भी नरसिंहराव को इस बात का उल्लेख करने में हिचकिचाहट नहीं हो रही थी कि जिस व्यक्ति को समुद्र पार जाने के निषेध का उल्लंधन करने के लिए बहिष्कृत किया गया था, वही सामाजिक दबावों के अधीन होकर प्रायश्चित करने को राजी हो गया था । वे यह भी कहते हैं कि अद्भुत साहस रखनेवाले उस व्यक्ति के लिए वह सचमुच ही एक अधोगमन था । महीपतराम की कवि दलपतराम द्वारा की गई प्रशंसा और कवि नर्मद द्वारा की गई निन्दा दोनों को नरसिंहराव ने उद्धृत किया है । महीपतराम ने जो प्रायश्चित किया, इससे भोलानाथ विक्षुब्ध अवश्य हुए थे, परन्तु इसको लेकर उनकी मित्रता में कोई अंतर नहीं आया था ।

उनके प्रति महीपतराम के स्नेह और उनकी व्यवस्थाबद्धता के बारे में भी नरसिंहराव ने निर्दोष विनोद के साथ लिखा है ।

इसके बाद गणितशास्त्री लालशंकर उमियाशंकर का रेखाचित्र आता है । लालशंकर अहमदाबाद में प्रार्थना समाज के लिए प्रेरणा का स्रोत थे । एक सुधारक के रूप में उनमें जो जोश था और सामाजिक बोध था उनको लेकर लालशंकर गुजरात के धार्मिक और सामाजिक इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति बन गए थे ।

स्मरणमुकुर में नवलराम और अंबालाल के रेखाचित्र भी शामिल हैं । वे दोनों न

केवल धार्मिक और सामाजिक सुधारक थे, बल्कि कई तरह से निष्णात व्यक्ति भी थे । दोनों अत्यन्त बुद्धिमान थे, उनकी संवेदनाएं तीव्र थीं और उनमें जीवन का भरपूर उत्साह था । नरसिंहराव नवलराम को एक प्रतिमाशाली कवि, विद्वान, समीक्षक और चिंतक बताते हैं । नरसिंहराव को नवलराम का व्यक्तिगत परिचय तो नहीं था, परन्तु उनकी प्रतिभा से युवा नरसिंहराव इतने प्रभावित थे कि नवलराम उन्हें स्वर्गीय कक्षा में घूम रहे ग्रह के समान लगते थे । नरसिंहराव ने लिखा है कि नवलराम ने उनकी साहित्यिक प्रवृत्ति को रहस्यमय ढंग से प्रभावित किया था ।

नरसिंहराव ने अंबालाल का एक महान शिक्षक और कड़े अनुशासन के आग्रही व्यक्ति के रूप में उल्लेख किया है, जो अपने चेहरे के चुंबकीय आकर्षण के कारण अपने विद्यार्थियों के साथ सजीव सम्बन्ध स्थापित कर सकता था, और उन्हें अपने स्नेह के सम्बन्ध से बांध सकता था । अंबालाल विद्या और वाङ्मय को समर्पित थे और हर चीज में तफ़सील की सच्चाई के लिए उनका आग्रह होता था । और सब से बड़ी बात तो यह थी कि उनकी आदतें बहुत ही नियमित थीं । अपने मानसिक विकास को स्पष्ट दिशा देने वाले और उस पर प्रभाव डालने वाले उस गुरु अंबालाल के बारे में नरसिंहराव ने आदर के साथ लिखा है ।

नरसिंहराव ने सत्येन्द्रनाथ टैगोर के बारे में भी लिखा है जो अल्प समय के लिए एक धूमकेतु की तरह अहमदाबाद के प्रार्थना समाज में चमक गए थे । नरसिंहराव कहते हैं कि अपने बड़े भाई भीमराव विदेशी उपदेशक जैसे सत्येन्द्रनाथ के प्रवाही और विद्वतापूर्ण प्रवचनों के बड़े ही प्रशंसक थे । इसी संदर्भ में नरसिंहराव ने सत्येन्द्रनाथ बनर्जी तथा भोलानाथ की मैत्री के विषय में भी लिखा है । नरसिंहराव शुद्धता के आग्रही थे और इसीलिए वे अपने पिता की भाषा की सूक्ष्म लाक्षणिकताओं की उपेक्षा का उल्लेख करना नहीं टाल सकते हैं ।

नरसिंहराव एक बार सत्येन्द्रनाथ के साथ फिरोजशाह मेहता के निवास स्थान पर गए थे । सार्वजनिक स्थानों पर जिसके सिंह की गर्जना जैसे व्याख्यान दूर से सुने थे उस प्रखर पुरुष के व्यक्तित्व की मृदुता और सौम्यता देख कर नरसिंहराव प्रभावित हुए थे । सत्येन्द्रनाथ न होते तो नरसिंहराव ने दंतकथा के पात्र जैसे फिरोज़शाह मेहता का दूसरा पक्ष संभवतः न देखा होता ।

एक दूसरे से बिलकुल ही भिन्न ऐसे दो कवि दलपतराम और नर्मद को गुजराती साहित्य के इतिहास में समान महत्त्व दिया गया है । दोनों के गुण और साथ ही उनकी सीमाएं दिखाते हुए नरसिंहराव ने उनके रेखाचित्र लिखे हैं ।

दलपतराम ने ही प्रेमानन्द और अखो आदि गुजरात के कवियों के प्रति नरसिंहराव की रूचि जगाई थी । आभारवश होकर नरसिंहराव ने इसका उल्लेख किया है और उन दिनों के अपने सुखमय जीवन को याद करते हुए आनन्द-प्रवाह में बह गए हैं । उन्हें इस बात का भी स्मरण होता है कि दलपतराम द्वारा दी गई शिक्षा के कारण कुछ पारसी लेखक शुद्ध गुजराती में कविता लिखने को प्रेरित हुए थे ।

आधुनिक गुजराती कविता के इतिहास में दलपतराम और नर्मद को साथ ही देखना आवश्यक है । उन दोनों में अर्वाचीनों में आद्य कहलाने का नर्मद का विशेष दावा बनता है । इसका कारण यह है कि उनकी कविता का क्षेत्र अधिक व्यापक था और दलपतराम की कविता की अपेक्षा उनकी कविता अधिक व्यक्तिपरक थी । दलपतराम की कविता के विषय गम्भीर होते थे और प्रायः उसमें तत्कालीन स्थिति पर हलका-सा व्यंग्य भी होता था । यदि नर्मद की कविता संवेगात्मक थी तो दलपतराम की कविता में उनकी शांत मानसिकता और प्रगति के पथ पर क्रमशः प्रयाण करने की वृत्ति का आभास मिलता था । जबकि नर्मद की कविता में आधुनिक कविता में हम जो लक्षण ढूंढ़ते हैं, वे सभी करीब-करीब मिल जाते हैं ।

नरसिंहराव को नर्मद के परिचय में आने का अवसर भी प्राप्त हुआ था । पिता भोलानाथ बम्बई में नर्मद के घर पर गए थे तब नरसिंहराव भी साथ में थे । परन्तु तब नर्मद उस अवस्था में थे जब वह अपनी पहले की उग्रता और संवेगात्मक अभिगम को त्याग चुके थे । अपना दार्शनिक ग्रंथ धर्मविचार लिखने के बाद वह सौम्य हो गए थे । नरसिंहराव नर्मद के चेहरे को मुग्ध होकर देखते ही रह गए थे जिसमें उसकी बुद्धिमत्ता, विवेक और औदार्य व्यक्त हो रहे थे । माता गुर्जरी और सरस्वती की एकनिष्ठ समर्पण की भावना से सेवा करने वाले उस वीर पुरुष से मिलने का और कोई अवसर प्राप्त न हुआ इस बात का नरसिंहराव को अफ़सोस था ।

स्मरणमुकुर में नंदशंकर तुलजाशंकर तथा दुर्गाशंकर मंछाराम के भी रेखाचित्र हैं जिन्होंने गुजरात में धार्मिक सुधार के क्षेत्र में अपनी मुद्रा अंकित की है ।

नंदशंकर ने एक पाठशाला के आचार्य के रूप में अपने जीवन का आरम्भ किया था और अनेक क्षेत्रों में सक्रिय रहने के बाद अंततः कच्छ राज्य में दीवान के पद तक पहुंचे थे । परन्तु अंत तक वे सक्षम अनुवाद कर सकते थे और उनकी स्मरणशक्ति अद्भुत थी । वे मितभाषी थे और विवेक तथा सौजन्य उनके स्वभाव के प्रधान लक्षण थे । नंदशंकर की इन सब लाक्षणिकताओं का तथा उनकी सत्यप्रियता और स्वातंत्र्य की भावना का नरसिंहराव ने वर्णन किया है और उनके सुखमय वैवाहिक जीवन के बारे में भी लिखा है ।

चूंकि नंदशंकर अंग्रेज़ी के शिक्षक थे इसीलिए सब उन्हें 'मास्टर साहब' के नाम से जानते थे, और दुर्गाराम गुजराती पढ़ाते थे इसलिए वे महेताजी (मास्टर जी) कहे जाते थे । बचपन में नरसिंहराव ऐसा समझते थे कि दुर्गाराम विनोद नहीं समझ पाते थे और बहुत ही जल्दी उत्तेजित हो जाते थे । वे हमेशा सब को सन्देह की नज़र से देखते थे और किसी भी बात को अपने तक नहीं रख सकते थे । परन्तु उस वक्त नरसिंहराव उस व्यक्ति को पहचान नहीं पाए थे जो केवल एक महान शिक्षक ही नहीं, बल्कि अपने समय में प्रचलित अन्ध विश्वासों के विरुद्ध साहसपूर्ण आन्दोलन चलानेवाले एक समाज सुधारक भी थे । परन्तु समय बीतते नरसिंहराव ने यह सब समझ लिया था और **स्मरणमुकुर** में उन्होंने दुर्गाराम का जो चित्रण किया है, उससे यह स्पष्ट होता है ।

स्मरणमुकुर में एक रेखाचित्र मनसुखराम का है जिसका नरसिंहराव को उनकी पुस्तक 'शेक्सपियर कथासमाज' द्वारा परोक्ष रूप से परिचय हुआ था । गुजराती नाटक के सम्मान्य पिता माने जाने वाले रणछोड़लाल उदयराम के बारे में भी नरसिंहराव ने लिखा है । गुजराती रंगभूमि पर उस समय जो अश्लीलताएं देखने को मिलती थीं उन्हें रणछोड़लाल नापसन्द करते थे । परन्तु नरसिंहराव इस बात को लेकर हैरान थे कि बाद में रणछोड़लाल ने स्वयं 'निन्द्यशृंगारदर्शक' नाटक लिखा था और उसकी एक प्रति उन्होंने नरसिंहराव को भेंट भी दी थी ।

नरसिंहराव ने **स्मरणमुकुर** में विख्यात कवि कान्त को उचित स्थान दिया है । कवि कान्त ने ईसाई धर्म को स्वीकार किया था, फिर हिन्दू धर्म में लौट आए थे, परन्तु मन से तो वे ईसाई धर्म से कभी दूर नहीं हुए थे । नरसिंहराव और कान्त के बीच परस्पर स्नेह और आदर का भाव था । काव्य के एक विशिष्ट रूप में नरसिंहराव खंडकाव्य को उचित महत्व देते हैं और खण्डकाव्य को कान्त का गुजराती साहित्य में बहुत बड़ा योगदान बताते हैं । कान्त एक ऐसे कवि थे जिनके पास एक विशिष्ट जीवनदृष्टि थी और उनकी काव्यशैली स्पष्ट और सुचारु थी । उसी प्रकार कान्त एक प्रभावशाली वक्ता भी थे।

इसके बाद गुजरात के पुराने भाषा-विज्ञानियों में एक ऐसे ब्रजलाल कालिदास शास्त्री का रोचक रेखाचित्र था । शास्त्री की दो छोटी पुस्तकें **गुजराती भाषानो इतिहास** (गुजराती भाषा का इतिहास) तथा **उत्सर्गमाला** को नरसिंहराव भाषा विज्ञान के क्षेत्र में सीमाचिह्न मानते हैं ।

स्मरणमुकुर में कुछ ऐसे व्यक्तियों के भी चित्रण हैं जो गुजराती नहीं हैं । उदाहरणतः एक रेखाचित्र गोपालराव हरि देशपांडे का है जो प्रार्थना समाज की सभाओं में व्याख्यान तो देते थे, परन्तु घर पर मूर्ति की पूजा करते थे । परन्तु नरसिंहराव ने लिखा है कि यह कहना मुश्किल है कि गोपालराव मूर्तिपूजा में या और किसी भी चीज़ में विश्वास रखते थे । गोपालराव समग्र सृष्टि को एक मजेदार खिलौना समझते थे । वे एक निःस्पृह निरीक्षक की तरह थे जो हंसते-हंसते सब कुछ, सारी दुनिया को देखा करते थे । नरसिंहराव गोपालराव को एक देदीप्यमान प्रखर पुरुष के रूप में याद करते हैं जो सदा प्रसन्नचित्त रहते थे । **स्मरणमुकुर** में गोपालराव विभिन्न रूपों में सजीव हो उठते हैं ।

इसके बाद गोपालराव हरि देशमुख का रेखाचित्र है जो जन्म से तो महाराष्ट्री थे, पर मन से और स्वाभाविक वृत्ति से सर्वोत्कृष्ट गुजराती थे । काका साहब कालेलकर के बारे में भी ऐसा ही कहा जाता है, परन्तु गोपालराव तो उनके पुरोगामी थे । उनकी बुद्धिप्रतिमा अनन्य थी और श्रम के गौरव में उनकी श्रद्धा अडिग थी ।

नरसिंहराव ने **स्मरणमुकुर** में माधवराव रानडे, महादेव गोविन्द रानडे, गोविन्द विट्ठल करकरे आदि के बारे में भी लिखा है । परन्तु डा. रामकृष्ण गोपल भांडारकर का चित्रण कई तरह से महत्वपूर्ण है । नरसिंहराव ने डा. भांडारकर के संस्कृत भाषा के प्रति प्रेम

और समर्पण को तथा संस्कृत भाषा के ज्ञान को आवश्यकता के बारे में उनके आग्रह पर विशेष ध्यान दिया है और यह उचित ही है । इसके अतिरिक्त नरसिंहराव ने डा. भांडारकर और अपने बीच के अद्भुत गुरु-शिष्य सम्बन्ध का भी वर्णन किया है । डा. भांडारकर को उन्होंने महान गुरु बताया है । डा. भांडारकर ने भी नरसिंहराव की संस्कृत के प्रति अभिरुचि को पहचान लिया था और उन्हें उत्साहित किया था ।

इन सब के साथ **स्मरणमुकुर** में एक दूसरे विद्वान गणेश गोपाल पंडित का भी रेखाचित्र है जो उन्हें घर पर पढ़ाने आते थे, परन्तु बाद में भोलानाथ परिवार का अंग बन गए थे । व्यवहार में वे भी पूरी तरह से गुजराती बन चुके थे और विशुद्ध गुजराती में बात करना सीख गए थे । गणेश गोपाल पंडित इतने धर्मपरायण थे कि नरसिंहराव लिखते हैं कि 'किसी सद्भाग्य के क्षणों में ही ईश्वर ऐसे व्यक्ति से हमारा परिचय करा देता है ।'

स्मरणमुकुर में सबसे अच्छा चित्रण तो शायद नारायण हेमचन्द्र का है । वे एक संत पुरुष थे जिनमें कुछ विचित्रताएं थीं तो कुछ प्रीतिकर गुण भी थे । नरसिंहराव ने उनकी महानता के विषय में सच्चे हृदय से और मार्मिक शब्दों में लिखा है । साथ ही उन्हें ऐसा भी लगता है कि जिन्दगी के एक मोड़ पर कामुकता के शिकार बनकर नारायण हेमचन्द्र ने अपनी ही महानता को धोखा दे दिया था ।

नरसिंहराव को अपने पुत्र नलिनकान्त द्वारा गुजराती की विख्यात पत्रिका **'वीसमी सदी'** (बीसवीं सदी) के सम्पादक हाजी मोहम्मद का परिचय हुआ था । वह पत्रिका गुजराती पत्रकारिता का एक सीमाचिन्ह माना जाता है । हाजी मोहम्मद के मित्रों में विभिन्न क्षेत्रों के अनेक महान व्यक्ति शामिल थे । जैन साधु और विख्यात कलाकार धुरन्धर समेत अनेक चित्रकार, सरकारी अफसर और बम्बई की रंगभूमि से सम्बन्ध रखने वाले कितने ही लोग हाजी मोहम्मद के आत्मीय थे । संयोगवश नरसिंहराव भी इनमें से कुछ लोगों के परिचय में आए । 'वीसमी सदी' का प्रकाशन हाजी मोहम्मद के अथक परिश्रम से ही अनेक कठिनाइयों के बीच चालू रह पाया था । इस विस्मयकारी व्यक्ति का चित्रण स्नेहपूर्ण किया गया है ।

युगप्रवर्तक उपन्यास 'सरस्वतीचन्द्र' के लेखक गोवर्धनराम माधवराम त्रिपाठी का 'पंडित युग' के महान लेखकों में अग्रिम स्थान है । **स्वरणमुकुर** में नरसिंहराव ने उनकी सृजन-प्रतिमा, उनकी जीवनदृष्टि और उनके दार्शनिक चिंतन के बारे में उचित शब्दों में लिखा है और उनके उष्मापूर्ण गुणों की प्रशंसा की है ।

स्मरणमुकुर में नरसिंहराव के छोटे भाई भीमराव का भी एक छोटा-सा रेखाचित्र है । भीमराव ने 'पृथुराज रासो','देवलदेवी नाटक' तथा कुछ गरबियों की रचना की थी । उन्होंने **मेघदूत** का भी गुजराती में अनुवाद किया था । नरसिंहराव के कविता-संग्रह **कुसुममाला** के प्रकाशन के समय बीमार भीमराव ने अपने बिस्तर में लेटे हुए लिखा : 'तुमने मुझे कहीं पीछे छोड़ दिया है ।'

भीमराव इतने स्वरूपवान थे कि शाला में उनके साथी उन्हें 'सरोवर की सुन्दरी'

(लेडी ऑफ द लेक) कहा करते थे । स्वच्छता और सुव्यवस्था के विषय में वे बहुत ही दृढ़ आग्रह रखते थे और आत्म-विलोपन उपके स्वभाव में था । इस स्नेहपूर्ण चित्रण में नरसिंहराव ने भीमराव की ये सभी लाक्षणिकताएं दिखाई देती हैं ।

स्मरणमुकुर में नरसिंहराव ने अपने पुत्र नलिनकान्त तथा पुत्री ऊर्मिला के बारे में अत्यन्त मार्मिक शब्दों में लिखा है । वे दोनों प्रार्थना के समय उनके साथ रहते थे । नरसिंहराव ने उन भाई-बहन के उष्मापूर्ण प्रेम का उल्लेख किया है । उन्होंने नलिनकान्त की सत्य और ईश्वर के प्रति अडिग श्रद्धा के सम्बन्ध में भी लिखा है और उसे प्रार्थना समाज का उत्साही सदस्य बताया है । उन्होंने अपने पुत्र की कठोर शब्दों में सलाहना की थी इस बात का उन्हें गहरा दुःख है । वे कहते हैं कि पुत्र ने तो कदाचित् उन्हें माफ़ कर दिया होगा, पर वे स्वयं अपने को कभी माफ़ नहीं कर पाए हैं ।

नलिनकान्त हमेशा नरसिंहराव के साथी बनकर रहे । एक पिता होने के नाते पुत्र की असमय मृत्यु के कारण उन्होंने अपने को अकेला अनुभव किया । परन्तु फिर उन्होंने अपने आपसे ही प्रश्न किया । 'क्या मैं जीवन में अकेला हूं ?' और तुरंत ही उत्तर भी मिला : 'नहीं, जिस ईश्वर ने मेरे हृदय को अक्षुण्ण रखा है, वह मेरे अकेलेपन में भी मेरा साथी बनेगा ।' यह निःशंक नरसिंहराव की ईश्वर के प्रति जो श्रद्धा थी, उसी का द्योतक है ।

नलिनकान्त की 'प्रिय बहन' ऊर्मिला ने नलिनकान्त के पहले ही इस दुनिया से विदाय ले ली थी । यदि **विवर्तलीला** नरसिंहराव की पुत्री लवंगिका की मृत्यु के उल्लेख के साथ समाप्त होती है तो **स्मरणमुकुर** के अंत में ऊर्मिला की मृत्यु का उल्लेख आता है । इन दोनों रचनाओं में करुणता के कंपन का अनुभव होता है और मृत्यु की करुणता की गहराई से अनुभूति कर रहे कवि के हृदय का उसमें परिचय मिलता है ।

आरम्भ में ही लेखक प्रश्न करते हैं : 'क्यों मुझे अपनी एकलता की इतनी तीव्र अनुभूति हो रही थी ?' और तुरंत ही वे एडमंड बर्थ के शब्द उद्धृत करते हैं : 'जिन्हें मेरे बाद जाना चाहिए था, वे मुझसे पहले चले गए हैं, जिन्हें मेरी भावी पीढ़ी बनकर रहना चाहिए था, वे मेरे पूर्वज बन गए है ।'

उर्मिला की समाज सेवा की भावना इतनी तीव्र थी कि एक अन्ध कन्या को बुनाई करना सिखाने के लिए स्वयं उसने आंखें मूंद कर बुनाई करना सीख लिया था । उसे संगीत की अच्छी और स्वाभाविक समझ थी । वह अंग्रेज़ी से गुजराती में अनुवाद कर सकती थी और उनकी दो रचनाएं **उषानन्दिनी** और **कमलिनी** उसकी मृत्यु के बाद प्रकाशित हुई थीं ।

एक पिता के लिए अपनी संतानों की पुस्तकों की भूमिका लिखने का अवसर आया था, यह उनके अंतिम संस्कार करने जैसी ही बात थी । यह कैसी दुःखद स्थिति थी कि **स्मरणमुकुर** को उन्होंने यह लिखकर समाप्त करना पड़ा था : 'ओह मेरे पुत्र ! ओह मेरी पुत्री ! तुम्हारे नाम होठों पर लिए ही मैं संसार के इस निर्जन जंगल में भटक रहा हूं ।'

समीक्षक

(समीक्षक तो कवि का केवल जुड़वां भाई ही है)

यदि नरसिंहराव गुजराती कविता में नवीन धारा प्रवाहित करने वाले महत्त्वपूर्ण कवियों में एक थे तो साथ ही वे उतने ही महत्त्वपूर्ण समीक्षक और भाषाविज्ञानी भी थे । शब्दों के उचित प्रयोग और गुजराती भाषा की कविता-कला के विषय पर उनके निबन्ध द्वारा **वसन्त** पत्रिका में प्रकाशित हुए थे। हालांकि उनके द्वारा अपनाए गए स्वरविज्ञान को व्यापक स्वीकृति नहीं मिली थी, फिर भी विद्वानों ने उस स्वर्णिक पद्धति के वैज्ञानिक आधार को तो मान्य रखा ही है ।

नरसिंहराव के समीक्षात्मक लेखों में कविता का रसास्वाद, छन्दोबद्ध रचना, भाषा का विकास तथा साहित्य की मूलभूत अवधारणा जैसे विषय समाविष्ट थे । इन विषयों में उन्होंने अनेक सूक्ष्म और गहन तथा अर्थपूर्ण बातें कही हैं । विभिन्न अभिप्रायों की उन्होंने विस्तार से चर्चा की है और अंत में जो अभिप्राय उन्हें न्यायसंगत तथा वैज्ञानिक जान पड़ा, उसीका दृढ़तापूर्वक समर्थन किया है ।

मनोमुकुर

उनके समीक्षात्मक लेखों का प्रथम संकलन **मनोमुकुर - वा. I** 1924 में प्रकाशित हुआ । तब तक उन्हें एक महान और प्रतिष्ठित साहित्य-समीक्षक के रूप में सम्मान मिल चुका था । बाद में उसी शीर्षक से और तीन खण्ड भी प्रकाशित हुए । **नरसिंहरावनो काव्य- विचार** (नरसिंहराव के काव्य सम्बन्धी विचार) **मनोमुकुर** के इन ग्रन्थों से चुने हुए लेखों के संकलन के रूप में 1969 में प्रकाशित हुआ ।

स्मरणसंहिता के अपवाद से अपनी कविताओं की टिप्पणी नरसिंहराव ने स्वयं लिखी थी । यह इस बात का सूचक था कि अपने कविजीवन के आरम्भ से ही उन्होंने अपनी समीक्षा तथा अनुसंधान से सम्बन्धित शक्तिओं का भी विकास किया था । अपनी कविताओं की चर्चा में भी अनेक बार अपने भीतर का समीक्षक प्रकट हो जाता है ।

मनोमुकुर - वा. I के प्रथम विभाग में नरसिंहराव द्वारा 1883-84 और 1913-14 में लिखी गई पुस्तकों की समीक्षाएं तथा भूमिकाएं समाविष्ट हैं । इस विभाग में प्रथम लेख 'संन्यासी' के बारें में है, जो नारायण हेमचन्द्र का देव प्रसन्नो रायचौधुरी के बांगला

उपन्यास का गुजराती अनुवाद था । इस लेख से यह स्पष्ट होता है कि नरसिंहराव उपन्यास की कला को भी भली भांति समझते थे । पात्रों के मनोभाव, उनकी वैयक्तिक लाक्षणिकताएं, घटनाएं, उपन्यास में निरूपित उदात्त जीवन-दर्शन इनमें से कुछ भी नरसिंहराव की नज़रों से छूट नहीं जाता है । फिर भी नरसिंहराव उस उपन्यास का गुणदर्शन कराते हैं और साथ ही गुजराती के उपन्यासों के सम्बन्ध में भी समीक्षात्मक दृष्टि से लिखते हैं ।

इस विभाग में गुजरात के विख्यात संस्कृत पंडित मणिलाल नभुभाई द्विवेदी द्वारा किए गए भवभूति के **उत्तररामचरितम्** के गुजराती अनुवाद की भी समीक्षा है । गुजराती अनुवाद की समीक्षा करते हुए नरसिंहराव ने उस संस्कृत नाटक के विषय में भी लिखा है जिसमें उन्होंने राम-सीता के प्रेम को गहरी अंतर्दृष्टि से देखा है । उन्होंने यह बताया है कि अनुवाद में कुछ गलतियां आ गई हैं, क्योंकि अनुवादक बांगला पाठ का आधार लेकर चले हैं । वे यह स्वीकार करते है कि यदि मूल रचना सुग्रथित न हो तो इसके बारे मे अनुवादक कुछ नहीं कर सकता है । साथ ही वे इस बात पर भी जोर देते हैं कि अनुवादक को यह चाहिए कि वह मूल की सुन्दरता ओर खूबियों को भी अपने अनुवाद में प्रकट करे । फिर भी उनका अभिप्राय है कि इन पंक्तियों के होते हुए भी समग्र दृष्टि से **उत्तररामचरितम्** के इस अनुवाद का प्रभाव अनुकूल ही पड़ता है ।

इस विभाग में तीसरा लेख शुद्ध गुजराती में लिखने वाले पारसी कवि अरदेशर फरामरोज़ खबरदार के कविता-संग्रह **विलासिका** के विषय में है । लेख के आरम्भ में वे 'पारसी गुजराती' और शुद्ध गुजराती का भेद बताते हैं और बहेरामजी मलबारी का भी उल्लेख करते हैं जो गुजराती साहित्य में खबरदार के पुरोगामी थे ।

नरसिंहराव ने **विलासिका** में भी 'पारसी गुजराती' की कुछ छाया देखी थी । यह देखते हुए कि भाषा के विषय में वे शुद्ध के आग्रही थे, यह शायद अनिवार्य भी था । इस संग्रह की कविताओं की छन्द-रचना का भी उन्होंने विश्लेषण किया है और यह भी कहा है कि उन कविताओं का प्रवाह सरल है, वे अत्यंत परिष्कृत हैं और कर्णप्रिय भी हैं । समग्रतया उन्होंने **विलासिका** के काव्यात्मक गुण की सराहना की है और सावधानी बरतते हुए यह भी कहा है कि आनेवाली पीढ़ियां खबरदार को गुजराती कवियों की मध्यम श्रेणी में रख देंगी ।

नरसिंहराव शब्द और अर्थ को कविता के दो घटक और अलंकार को उन दोनों पर प्रभाव डालनेवाला तत्त्व बताते है । समग्र रूप से देखने पर उनको लगता है कि **विलासिका** में अलंकारों का सुरुचिपूर्ण प्रयोग किया गया है, हालांकि कुछ स्थानों पर ऐसा भी लगता है कि अलंकार का प्रयोग यूं ही किया गया है । इस अभिप्राय की नरसिंहराव ने दृष्टांतों द्वारा पुष्टि की है ।

नरसिंहराव ने कहा है कि खबरदार की काव्य शक्ति इस प्रकार कार्यान्वित हो रही थी कि उनकी कविता में दलपतराम और नर्मद के काव्य-सृजन की कुछ विशेषताओं का आ जाना अनिवार्य था ।

अंततः उनका यह अभिप्राय बनता है कि **विलासिका** एक ऐसा संग्रह है जिसमें कविताएं सृजनात्मक दृष्टि से असमान स्तर की हैं । उन्होंने यह भी देखा है कि **विलासिका** में कुछ कविताएं ऐसी भी हैं जिनमें नवीनता है और उनमें व्यक्त होने वाली कल्पना के कारण सुचारु बन जाती हैं ।

मनोमुकुर - वा. I के दूसरे विभाग में रस और कला के मूलभूत तत्त्वों के सम्बन्ध में चर्चा की गई है । 'वसन्तोत्सव', 'गुजराती कविता और संगीत' और 'कविता में असम्भाव्यता का दोष', 'कृत्रिम भावनाओं का आरोपण' जैसे विषयों पर सात लेखों में चर्चा की गई है । अपने 75 वें जन्म-दिन के अवसर पर अभिनन्दन का उत्तर देते हुए उन्होंने कहा था : "कला और सौन्दर्य शास्त्र की चर्चा नीरसता के बिन्दु तक पहुंच गई है ।" परन्तु इन लेखों में स्वयं उन्होंने नम्रतापूर्वक चर्चा की है, जो ध्यान देने योग्य है ओर उनकी दलीलें प्रायः सार्वत्रिक स्वीकार के पात्र हैं । उनका तर्कसंगत अभिगम ओर समम्भवतः सभी पहलूओं का विस्तार से परीक्षण करने के बाद स्पष्ट रूप से बताने की उनकी क्षमता इन लेखों में देखने को मिलते हैं । प्रत्येक लेख में उनका सौन्दर्यबोध ओर सौन्दर्य तथा सत्य के प्रति उनका प्रेम प्रकट होता है ।

इसके बाद के विभाग में 'जीवन-दर्शन' की चर्चा है जिसमें नरसिंहरावने नारायण हेमचन्द्र तथा नवलराम त्रिवेदी के बारें में लिखा है । इन दोनों के उल्लेख **स्मरणमुकुर** में भी आते है । परन्तु **मनोमुकुर** में नरसिंहराव ने उनके लेखन की अधिक सूक्ष्मता से और विस्तार से चर्चा की है । उन्होंने नारायण हेमचन्द्र की विचित्रताओं और भद्देपन के बारे मे लिखा है और साथ ही उनके गुणों तथा दोषों का भी निर्देश किया है । परन्तु जीवन के उत्तरार्ध में नारायण के नारी-सम्बन्धी समस्त दोषों को नरसिंहराव ने स्वीकार कर लिया है और उन्हें माफ भी कर दिया है । वस्तुतः उस सरल हृदय के पुरुष के बारे में यह कहकर उन्होंने प्रशंसा की है कि 'ईश्वर के मन्दिर में हमारे कई महापुरुषों की अपेक्षा उनका स्थान ऊंचा है ।'

इसके बाद नवलराम की साहित्य सेवा का सविस्तर मूल्यांकन है । नवलराम गुजरात के आरम्भ के साहित्य-समीक्षकों में से थे । वे कवि और नाट्यकार थे और भाषा विज्ञान के भी निष्णात थे । वे मासिक पत्रिका **शालापत्र** के प्रबुद्ध सम्पादक थे । वे एक समाजसुधारक थे और उनकी धर्म भावना प्रबल थी । वे नर्मद के निकट के मित्र थे । एक साहित्यकार के रूप में नवलराम के बारे मे नरसिंहरावने लिखा है : 'नवलराम पहले कवि और विद्वान थे और बाद में समीक्षक । दूसरे शब्दों में, यह नहीं भूलना चाहिए कि वे समीक्षक इस लिए हुए कि वे कवि और विद्वान थे ।

आगे चल कर 'समीक्षक कवि का केवल जुड़वा भाई है' इस कथन की नरसिंहराव चर्चा करते है । वे कहते हैं : "दोनों कल्पनासृष्टि और भावसृष्टि में एक साथ विचरण करते हैं । प्रतिभा ओर कल्पना के दो पंख दोनों के लिए आवश्यक है ।" भेद केवल इतना है कि उन दोनों के कार्य भिन्न प्रकार के होते हैं । कवि का कार्य है संश्लेषण करना और समीक्षक का कार्य है विश्लेषण करना । परन्तु समीक्षक को यह समझ लेना

चाहिए कि उसे किस चीज़ का विश्लेषण करना है । तात्पर्य यह है कि समीक्षक में कवि के समान ही प्रतिभा ओर कल्पनाशक्ति की आवश्यकता है । इस कथन द्वारा कवि और समीक्षक के सम्बन्ध में नरसिंहराव के विचार अत्यंत स्पष्ट रूप से समझ में आ जाते है । साथ ही इससे नवलराम के प्रति नरसिंहराव का आदरभाव भी प्रकट हो जाता है ।

नरसिंहराव की राय में 'देशी पिंगल' के विषय में नवलराम का अभिगम अनन्य और प्रशंसनीय है । उन्होंने कहा है कि नवलराम के 'काव्य-विचार' में कविता और माया की संकल्पना का सम्बन्ध प्रकट होता है जो एक 'अनन्य बौधिक प्रक्रिया' का परिणाम है । सुन्दर और उदात्त के सम्बन्ध में एडमंड बर्क के दो आदर्शो में नवलराम ने भयानक का तीसरा आदर्श जोड़ दिया है जो नरसिंहराव को आपत्तिजनक लगता है । स्वयं उन्होंने तो सुन्दर उदात्त और भव्य का आदर्श मान रखा था ।

नरसिंहराव का अभिप्राय था कि नवलराम सचमुच कलाकार नहीं थे । हां, वे सही मायने में रसिक तो अवश्य थे ।

जैसे कि पहले कहा गया है, नवलराम की काव्य-शक्ति को मानते हुए भी नरसिंहराव ने उनकी एक सक्षम समीक्षक के रूप में बड़ी प्रशंसा की है । उन्होंने कहा हैं : 'समग्रतया अपनी अनन्य शक्ति, उत्साह, निष्पन्नता तथा औदार्य के सुभग संयोग के कारण नवलराम पन्द्रह वर्षों तक एक समीक्षक के उच्च और जिम्मेदारी के स्थान पर कायम रहे । वे यहां तक कहते हैं कि 'नवलराम के पहले कोई समीक्षक था ही नहीं ' । ऐतिहासिक दृष्टि से यह अकाट्य कथन है ।

इसके बाद के विभाग में धर्म और दर्शनशास्त्र के विषय पर दो लेख हैं : 'विश्वरचना' ओर 'स्वेच्छा स्वीकार' । पहले लेख का आरम्भ भौतिक तत्त्वों के प्रश्न को लेकर होता है ओर उसमें सृष्टि के उद्‌भव के सिद्धान्त की गहराई से चर्चा की गई है । दूसरा लेख चिंतनात्मक लेखन का एक दृष्टान्त है जिसके लिए उनको पेतों के चित्र 'चोइस' (Choice) से प्रेरणा मिली थी । उसी चित्र से प्रेरित होकर नरसिंहराव ने 'स्वेच्छा स्वीकार' कविता भी लिखी थी जिसका उल्लेख हो चुका है ।

मनोमुकुर - वा. I में हास्य-व्यंग के लेखों का विभाग भी है जिसमें गम्भीर प्रकृति और कठोर माने जाने वाले विद्वान लेखक का विनोदी पत्र भी सामने आता है ।

इस पुस्तक के अंतिम विभाग में नरसिंहराव के अत्यंत प्रिय विषय भाषा और व्याकरण के बारें में भी दो लेख हैं । पहले लेख में कर्ता, विधेय और पदलोप की और दूसरे में गुजराती भाषा की संरचना की चर्चा की गई है । इन दो लेखों द्वारा नरसिंहराव एक भाषाविज्ञानी के रूप में स्थापित हो गए ।

मनोमुकुर - वा. I के अनुगामी तीन खंड 1936-38 में प्रकाशित हुए । इनमें नरसिंहराव के साहित्य विषयक लेखों को संग्रहीत किया गया है । इन खंडों में समकालीन तथा नवोदित लेखकों की रचनाओं के मूल्यांकन है । विभिन्न साहित्य-संस्थाओं

में दिए गए उनके व्याख्यान भी इनमें समाविष्ट हैं । वस्तुतः इन खण्डों में साहित्यिक तथा साहित्येतर विषयों के सम्बन्ध में विपुल सामग्री प्राप्त होती है और हर चीज़ को उसके समग्र सन्दर्भ में देखने की नरसिंहराव की शक्ति का भी परिचय होता है । इस लेखन में वे किसी पत्रकार की तरह शब्दों के खिलवाड़ में बह नहीं गए है, परन्तु एक ऐसे विद्वान व्यक्ति का उदारतावादी चिंतन इसमें पाया जाता है जिसके पास व्यापक विचार-शक्ति थी और जो जीवन भर गहरी सौन्दर्यपरक भावना और सत्यनिष्ठा से प्रेरित होता रहता था । जहां भी उन्होंने गुण, सत्य और सौन्दर्य को देखा, उन्होंने तत्क्षण पहचान लिया, चाहे वे लक्षण अपने किसी विरोधी व्यक्ति में ही क्यों न हो । साहित्यिक समीक्षा में नरसिंहराव ने हमेशा सम्बन्धित रचना के गुणों को ही प्रमुखता देकर सराहा । परन्तु साथ ही उस कृति की त्रुटियों का भी स्पष्ट शब्दों में निर्देश किया । रचना चाहे किसी अनुभवी लेखक की हो या नवोदित की, दोनों के लिए उन्होंने मूल्यांकन का एक ही मानदंड अपनाया । उस रचना का और गुजराती की अन्य रचना या अंग्रेजी जैसी किसी विदेशी भाषा की रचना के साथ कोई साम्य हो तो उन्होंने बिना हिचकिचाहट के उसका भी निर्देश किया । परन्तु किसी भी लेखक पर साहित्यिक चोरी का आरोप तो उन्होंने शायद ही लगाया । जब कनैयालाल मुनशी ने अपने विख्यात ऐतिहासक उपन्यास **पाटणनी प्रभुता** (पाटण की प्रभुता) और **गुजरातनो नाथ** (गुजरात का नाथ) लिखा तो उन पर यह आरोप लगाया गया था कि उन्होंने अलैक्जांडर दूमा से चोरी की थी । परन्तु नरसिंहराव दृढ़तापूर्वक मुनशी के पक्ष में खड़े रहे और सिद्ध किया कि मुनशी के विरुद्ध साहित्यिक चोरी का आरोप निर्मूल था ।

प्रेरणा के सम्बन्ध में लिखते हुए नरसिंहराव उसके विभिन्न स्वरूपों की चर्चा करते हैं और प्रेरणा के स्रोत का महत्त्व बताते हैं । यदि एक लेखक किसी अन्य लेखक की रचना से प्रेरित हुआ हो या उस रचना को एक आदर्श के रूप में अपने समक्ष रखते हुए और उसे आत्मसात् करते हुए कुछ नया सृजन किया हो या बुद्धिपूर्वक उसका अनुकरण भी किया हो तो उसे साहित्यिक चोरी नहीं कहा जा सकता है । किन्तु किसी लेखक की रचना को पूरा का पूरा अपना कर इसमें यत्र-तत्र कुछ परिवर्तन करके मूल स्रोत को स्वीकार किए बिना कुछ लिख देना साहित्यिक चोरी के आक्षेप के लिए अवश्य मार्ग खोल देता है । नरसिंहराव की राय में कविता के भरन का मूल स्रोत तो दुनिया भर में एक समान ही है और मनुष्य के हृदय के भावों पर प्रभाव डालने वाले कारक तत्त्वों तथा प्रविधियों में विस्मयकारी साम्य है । एव कवि, अन्य किसी कवि के सृजन से प्रेरित होते हुए भी साहित्य के गगन में विरल तारक की भांति चमकता है । इस प्रकार की प्रेरणा को सम्प्रेषण कहा जा सकता है । ऐसा सम्प्रेषण जब न हो पाए, जब कोई विषय सामाजिक सामग्री के अंश की तरह सम्प्रेषित न हो जाए तो रूपांतरण चाहे कितने ही चातुर्य के साथ किया गया हो, उसे साहित्यिक चोरी ही मानना उचित होगा । मूल्यांकन का ऐसा मानदण्ड नरसिंहराव की निष्पक्ष वृत्ति का सूचक है ।

नरसिंहराव अनुवाद आदि क्रियाओं के भी पक्षधर थे । उनकी यह मान्यता थी कि काव्य-सृजन के प्रयास में सफल होने के लिए पहले अनुवाद, बाद में अनुकरण, फिर

संयोजन और रूपांतरण और अंत में मौलिक कविता लिखना लाभप्रद होगा । अन्वेषण की भावना और सत्य का आग्रह तथा उनकी प्रामाणिकता की यह संहति नवीन गुजराती कविता का समय निर्धारित करने के उनके प्रयास में स्पष्ट दिखाई देता है । वे कहते हैं : "कविता का कोई झीयूस के सिर में से प्रकट होने वाली शस्त्रास्त्र कवचधारी सेथीन की तरह जन्म नहीं होता है । वह तो उल्क्रांति के गूढ झरनों के प्रवाह पर तैरती हुई आती है ।"

नरसिंहराव के इस विषय में किए गए अनुसंधान के परिणाम स्वरूप नरसिंह महेता ओर प्रेमानन्द जैसे गुजरात के महान कवियों के बाद के भालण, केशव, कर्मण, नाकर आदि कवियों के बारे में जानकारी प्राप्त हुई । और इससे गुजराती साहित्य के इतिहास को नए सिरे से प्रस्तुत करना आवश्यक हो गया । इसी प्रकार नरसिंहराव ने हरिलाल ध्रुव, भीमराव भोलानाथ और बालाशंकर जैसे कवियों का महत्त्व भी समझा जो नई गुजराती कविता के अग्रदूत थे ।

नरसिंहराव द्वारा किया गया प्राचीन गुजराती साहित्य का अध्ययन निस्सन्देह विवेकपूर्ण था । साथ ही अपने जीवनकाल में उन्हें लेखकों की तीन पीढ़ियों का परिचय हुआ था, यह भी अत्यन्त मूल्यवान और फलदायी था । छोटी-छोटी रचनाओं से लेकर बृहद् ग्रन्थों के बारे में उन्होंने जो अनेक समीक्षात्मक लेख लिखे थे, उनसे यह बात स्पष्ट होती है । किसी भी साहित्यिक रचना को वे अभिभावक की दृष्टि से देखते थे । फिर वह रचना चाहे किसी प्रसिद्ध लेखक की हो या किसी नवोदित द्वारा लिखी गई हो । यही कारण है जिससे वे आधुनिक गुजराती साहित्य के पिता कहलाने के पात्र बने । रोज़ाना ज़िन्दगी की कठिनाइयों से भड़क कर मनुष्य न केवल अपनी स्थिति से छुटकारा पाना चाहता है, परन्तु हर स्थिति में वह असंतुष्ट रहता है । इसिलिए उन्होंने कहा कि व्यक्ति जीवन की भौतिक परिस्थितियों में उत्तेजना ढूंढ़ता है । वह ऊंचा उठना चाहता है, भावनाओं की तथा सुन्दरता तथा सौन्दर्यपरक अनुभूतियों की सृष्टि में विहार करना चाहता है । नरसिंहराव का यह दृढ़ विश्वास था कि आध्यात्मिकता के मार्ग पर चल कर ही मनुष्य अपनी क्षुधा को तुष्ट कर सकता है, जो सांसारिक हस्ती से बाहर है । उनकी राय में संगीत जैसी दिव्य कलाओं द्वारा ऐसी आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त हो सकती है । इस आध्यात्मिक गुण में ही सच्ची महत्ता निहित है । उनका अभिप्राय था कि इन कलाओं को तामसिक क्षुधाओं की तुष्टि के हेतु भ्रष्ट होने देना ग़लत होगा । मनुष्य में अपने को जीवन की भौतिक परिस्थितियों से मुक्त करने की प्रबल इच्छा होती है और आश्वासन और आनन्द की प्राप्ति के लिए वह ललित कलाओं की ओर मुड़ता है । ऐसा होने पर ही कला का सृजन संकल्पित न रहकर सौन्दर्य की खोज में एक साहजिक क्रिया बन जाता है जिसका मनुष्य के हृदय के अंतरतम से उद्भव होता है ।

नरसिंहराव की यह मान्यता थी कि धन या यश प्राप्त करने का क्षुल्लक उद्देश्य कोई भी प्रामाणिक अनुशीलन का प्रेरक बल नहीं बन सकता है । यदि इस उद्देश्य से कला का सृजन किया गया हो तो वह सृजन अतिसामान्य ही होगा ।

कविता को जीवन की अन्वीक्षा बताया गया है, यह उचित ही है । परंतु नरसिंहराव का विचार था कि कविता की यह व्याख्या अपूर्ण है । वे कहते हैं कि कविता केवल जीवन की अन्वीक्षा की नहीं है, परंतु वह जीवन की सुन्दर शब्दों में की गई अन्वीक्षा है । इसका अर्थ यह होगा कि एक ओर तो दर्शनशास्त्र को बाहर रखा जाए और दूसरी ओर शुष्क गद्य का परिहार हो ।

उनका यह भी अभिप्राय है कि कवि के हृदय में मनुष्य के सुख-दुःख तथा उसकी आशा-निराशा के प्रति सहानुभूति होनी चाहिए । किसी भी जीवित और प्रबुद्ध व्यक्ति के हृदय में कहीं कविता का अंश होगा, तभी उसके लिए कविता की प्रत्यक्ष अनुभूति करना सम्भव होगा ।

फिर, मनुष्य दुनिया में अकेला भी नहीं होता है । उसके आसपास बाहरी दुनिया है, प्रकृति है । ऐसी स्थिति से ही कविता के लिए विषय मिल सकता है । इसका अर्थ यह हुआ कि कविता सुन्दर शब्दों में जीवन और दुनिया का अन्वीक्षण है । दूसरे शब्दों में किसी सौभाग्यशाली उत्प्रेरणा के प्रभाव में कवि के हृदय में जीवन तथा प्रकृति के जो सहज प्रतिभाव उठता है, उसीसे कविता का उद्‌भव होता है । इसिलिए उन्होंने कहा कि मनुष्य द्वारा रची गई कविता में उसकी बाहरी विभिन्न लाक्षणिकताओं के बावजूद मूलतः समान लक्षण होना अनिवार्य है । यह तात्त्विक समानता समय और स्थल के विचारों से परे है । सच तो यह है कि कविता को प्राचीन या आधुनिक एशियाई या यूरोपीय जैसी मुहर लगाने का कोई कारण नहीं है ।

जैसे विभिन्न स्वरूपों में व्यक्त होने पर भी ब्रह्म को व्यापक निरुपाधि, अविकृत परम तत्त्व माना जाता है, वैसे ही कविता भी उसके विभिन्न स्वरूपों के होते हुए भी एक ही है । नरसिंहराव को यह विश्वास था कि मनुष्य की कोई भी क्रिया यदि ब्रह्म के उच्च स्थान के योग्य है तो कविता का अनुशीलन ही है ।

वर्ड्‌ज़वर्थ द्वारा की गई कविता की यह व्याख्या कि कविता 'प्रबल भावनाओं का सहज उमड़ता हुआ प्रवाह है' के बारे में नरसिंहराव कहते हैं कि यह सत्य है कि भावनाओं की उथल-पुथल कविता का मूल स्रोत है, फिर भी काव्य-सृजन में एक और प्रक्रिया भी सहायक होती है । दर्शनशास्त्र और कविता सत्य को देखते हैं और प्रकट करते हैं । परंतु दर्शनशास्त्र की प्रक्रिया विश्लेषण और काव्य-सृजन की प्रक्रिया विस्मय के भाव के आधार पर होती है । दोनों के सामने जीवन, सृष्टि और ब्रह्म से सम्बन्धित समस्याएं होती हैं जो मनुष्य में जिज्ञासा और विस्मय जगाती हैं । परंतु जब तक भावात्मक उत्तेजना न हो, तब तक कविता का सृजन नहीं होता ।

इस प्रकार नरसिंहराव के मन में काव्य-सृजन के लिए भावात्मक उत्तेजना और विस्मय का मिल जाना आवश्यक है । परंतु वे यह भी स्वीकार करते हैं कि इस नियम में कुछ अपवाद भी हो सकते हैं और किसी विरल क्षणों में तीव्र भावात्मक उत्तेजना उत्पन्न हो सकती है ।

अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में भाषा के सम्बन्ध में नरसिंहराव कहते हैं कि भाषा

मनुष्य को प्राप्त सबसे बड़ा साधन है जिसके द्वारा वह सत्य, सौन्दर्य और शिव को समझ सकता है और उन्हें व्यक्त कर सकता है । परंतु इन गुह्य तत्त्वों को समझना इतना कठिन है कि उन्हें पूर्णतया व्यक्त करने का प्रयास करने पर भी शब्द एक अपर्याप्त साधन बनकर रह जाता है । नरसिंहराव का अभिप्राय है कि कविता ही अप्रकट या गोपित को प्रकट करने का प्रयास होता है । यहां स्वाभाविक प्रतीकों का प्रयोग किया जाता है । प्रतीकों द्वारा अदृश्य तत्त्वों का प्राकट्य ही कविता है ।

परंतु वास्तव में सौन्दर्य का अर्थ क्या होता है ? वे कहते हैं कि अरस्तू के अनुसार सौन्दर्य का उद्‌गम संतुलित अनुपात से होता है, जबकि नियोप्लेटोनिक दर्शन के अनुसार सौन्दर्य का उद्‌गम भावनाओं से होता है । परंतु नरसिंहराव को ऐसा व्यापक दृष्टिबिन्दु स्वीकार करने योग्य लगता है, जिसके अनुसार सौन्दर्य सप्रमाणता के भौतिक तत्त्व और भावनावाद के अभौतिक तत्त्व का सहज समन्वय है । उनका कहना है कि कला-सृजन में अपनाए जानेवाले सप्रमाणता के सिद्धान्त को साहित्य के क्षेत्र में भी अपनाना चाहिए । मूल्यांकन का एसा मानदंड न होने से सब कुछ शिथिल, विसंवादी और कठोर बनकर रह जाएगा ।

काव्यात्मक संवेदना के साथ कविता का एक भौतिक स्वरूप भी होना चाहिए, जिसमें कविता का गुण प्रतिबिम्बित हो । परंतु कविता का भौतिक स्वरूप क्या है ? यह स्वरूप गद्यात्मक है या पद्यात्मक ? नरसिंहराव काव्य और कविता में भेद करते हैं । वे कहते हैं कि काव्य काव्यमय सृजन की क्रिया है और कविता काव्यात्मक स्वरूप की एक विशेष रचना है । पद्य-रचना शब्दों का एक विन्यास है, जिसमें लघु-गुरु मात्रा के नियमों पर ध्यान दिया जाता है । परंतु गद्य-रचना के शब्द-विन्यास में ऐसे नियमों का बन्धन नहीं होता है और इसिलिए वह विन्यास नियमित और दैनिक व्यवहार की भाषा में किया जाता है । नरसिंहराव के मत के अनुसार पद्य-रचना कविता का एक स्वरूप है, जबकि काव्यात्मक गुण इस स्वरूप से स्वतन्त्र होता है । इसीलिए कभी किसी गद्य-रचना में काव्यात्मक गुण होना सम्भव है, परंतु कविता में तो काव्यात्मक गुण होना अनिवार्य है ।

अपने जीवन के अंतिम वर्षों में नरसिंहराव अपने निराशा के क्षणों में ऐसी चर्चा को कभी-कभी पानी को मथने की क्रिया भी बताते थे । परंतु ऐसे मंथन द्वारा आज भी कुछ मूल्यवान तत्त्व पाना सम्भव है । अपने ही अनुभवों के आधार पर बौद्धिक तथा भावात्मक स्तर पर उनके मूलभूत निष्कर्षों में ऐसा बहुत कुछ है जो आज भी महत्त्वपूर्ण है ।

भाषाविज्ञानी

(भाषा का अध्ययन भी साहित्य-समीक्षा का एक अंग है ।)

भाषाविज्ञान के क्षेत्र में नरसिंहराव का बहुत ही बड़ा योगदान था । उनका अभिगम वैज्ञानिक था जो शुद्धि, औचित्य और यथातथ्य के लिए उनके आग्रह का परिणाम था । यहां यह कहना प्रासंगिक होगा कि गणितशास्त्र का उनका ज्ञान अच्छा था और इसके कारण समीक्षा की शुद्धि और यथातथ्य के लिए उनका आग्रह और भी दृढ़ बना था । इसके परिणामस्वरूप कहीं भी मद्यपान देखकर वे चिढ़ते थे । गणितशास्त्र की उनकी शिक्षा भाषाविज्ञान जैसे परिशुद्ध विषय के अध्ययन में उन्हें अत्यन्त सहायक बनी थी ।

बम्बई विश्वविद्यालय ने 1915-16 में उन्हें विख्यात विल्सन भाषाशास्त्रीय व्याख्यान (Wilson Philolagical Lectures) देने का आमंत्रण देकर सम्मानित किया । ये सात व्याख्यान (Gujrati Language and Literature) शीर्षक से दो खंण्डों में प्रकाशित हुए । प्रथम खंड 1921 में और द्वितीय खंड 1932 में प्रकाशित हुआ । दोनों खंड उन्होंने अपने गुरु डा. रामकृष्ण भांडारकर को अर्पित किए ।

द्वितीय खंड में प्रकाशित तीन व्याख्यान के विषय हैं : गुजराती भाषा का इतिहास और विकास, गुजराती साहित्य के इतिहास की रूपरेखा और गुजराती भाषा तथा साहित्य का भविष्य । ये व्याख्यान अत्यन्त अभ्यासपूर्ण है और उनमें अपने तर्क की पुष्टि के लिए उन्होंने प्रचुर मात्रा में सन्दर्भ दिए है । परिशिष्ट में दी गई सन्दर्भों तथा पुस्तकों की लम्बी सूची इन व्याख्यानों के लिए नरसिंहराव के व्यापक स्तर पर किए गए शोधकार्य को उजागर करती है ।

साहित्य की समीक्षा की भांति ही इन व्याख्यानों में नरसिंहराव की तर्कसंगत विचारणा स्पष्ट होती है । बिना किसी की सहायता से इस क्षेत्र में उन्होंने महत्त्वपूर्ण कार्य किया और इस क्षेत्र के अपने पुरोगामी और साथ ही व्रजलाल शास्त्री, नवलराम, केशव हर्षद ध्रुव आदि समकालीन विद्वानों के कार्य की महत्ता को पहचाना । उसी प्रकार ग्रियर्सन, टेसिहारी आदि पश्चिम के उस समय के भाषाविज्ञानियों के कार्य को भी उन्होंने महत्त्व दिया । इस विषय में प्राप्त सामग्री का उन्होंने अध्यवसाय से प्रयोग किया । उन्होंने अपने ही विशिष्ट सिद्धांत प्रतिपादित किए और अपने पुरोगामियों के सिद्धांतों का विरोध करने का साहस भी दिखाया । अपने ही समय में बलवन्तराय

ठाकोर ने भाषाविज्ञान के क्षेत्र में नरसिंहराव के कार्य को महत्त्वपूर्ण बताया । रामनारायण पाठक और विष्णुप्रसाद त्रिवेदी जैसे श्रेष्ठ समीक्षकों ने भी इस क्षेत्र में नरसिंहराव के कार्य की मूल्यवत्ता को स्वीकार किया है ।

भाषाविज्ञान की दृष्टि से नरसिंहराव ने विशेष रूप से गुजराती में प्रचलित तीन प्रकार के उत्सर्गों की, अंशतः गुजराती में पाए जाते उत्सर्ग और गुजराती तथा अन्य भाषाओं में सामान्यतः प्रचलित उत्सर्गों की चर्चा की है ।

गुजराती भाषाविज्ञान की दृष्टि से प्राकृत, अपभ्रंश और प्राचीन राजस्थानी भाषाओं का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है । पश्चिमी भाषाविज्ञान का ज्ञान भी इतना ही आवश्यक है । नरसिंहराव ने यह ज्ञान अधिकाधिक मात्रा में प्राप्त कर लिया था और सुयोग्य दृष्टान्तों द्वारा उस विषय की वैज्ञानिक ढंग से चर्चा की थी । संज्ञाओं तथा विशेषणों के अंत में आते विवृत 'ए' और 'ओ' का उच्चारण तथा अरबी और फारसी से व्युत्पन्न शब्दों के अंत में आते 'शांत','ओ','औ' और 'ए' की उदाहरण देकर विस्तार से चर्चा की है । 'हकार' और 'ह' के स्थानान्तर और ध्वनि लोप भी उन्होंने दिखाए हैं । क्रियापदों के धातु, अनुस्वार तथा तीन प्रकार के अनुनासिक स्वराघातों तथा गुजराती में प्रचलित अनुनासिक स्वराघात का लोप भी उन्होंने ध्यान में लिया है । विवृत 'ए' और संवृत 'ओ' की चर्चा में उन्होंने 'सम्प्रसारण' तथा 'अतिसम्प्रसारण' की भी बात की है । इस सम्बन्ध में उन्होंने स्वराघात के प्रश्न को लेकर भी विवरण दिया है और यह भी बताया है कि संयोगलोप के कारण पूर्वस्वर दीर्घ हो जाता है और दीर्घ स्वर अधिकृत रहता है । साथ ही उन्होंने (स्वरों के) संयोग का भी विश्लेषण किया है ।

इस सम्बन्ध में नरसिंहराव ने गुजराती भाषा पर अन्य प्रान्तों (अब राज्यों) की तथा फारसी और अरबी भाषाओं के प्रभाव की भी चर्चा की है और स्पष्ट किया है कि ऐतिहासिक दृष्टि से यह उचित और अनिवार्य भी था । विभिन्न मानव सम्पर्कों और विभिन्न जन-समूहों के साथ हिलने-मिलने के सन्दर्भ में उन भाषाओं का आपस में प्रभावित न होना कैसे सम्भव था ? मिस्र और रोम के प्रभाव का उदाहरण देते हुए नरसिंहराव ने भाषाएं राजनैतिक और सामाजिक घटनाओं से कैसे प्रभावित होती हैं, यह दिखाने का प्रयास किया । किसी भी भाषा के विकास को समझने के लिए जिन मार्गदर्शक नियमों का पालन करना चाहिए, इनके बारे में भी उन्होंने विस्तार से बताया है । ये मार्गदर्शक नियम इस प्रकार हैं – 1) ऐतिहासिक वैधता, 2) ध्वनि के केवल बाह्य साम्य का अविश्वास, 3) कृत्रिम व्युत्पत्ति की अपगणना, 4) बीज लाघव तथा क्रमलाघव, 5) ऐतिहासिक सन्दर्भों के लिए आग्रह और 6) स्वयं भाषा में प्रचलित प्रयोग । इन कुछ मुद्दों को उन्होंने वाग्व्यापार में परस्पर प्रभावित करने वाले परिबल बताए हैं और गुजराती में विभक्ति के प्रत्ययों की प्रतीतिकर ढंग से चर्चा की है ।

इस प्रकार Gujrati Language and Literature द्वारा यह पूर्णतया सिद्ध होता है कि भाषाविज्ञान जैसे कठिन विषय के प्रति नरसिंहराव का अभिगम तर्कसंगत और वैज्ञानिक था । इस क्षेत्र में अपने पुरोगामियों के अभिप्रायों को समझने के बाद उन्होंने

उनकी आलोचना की और अपने विशेष निष्कर्ष पर पहुंचे जिन्हें वे वैध समझते थे ।

परन्तु यह उल्लेख करना आवश्यक है कि स्वरविज्ञान के विषय में उनका ज्ञान सीमित था । फलस्वरूप, स्वरविज्ञान के आधुनिकतम ज्ञान के साथ इस क्षेत्र में प्रवेश करने वाले विद्वानों ने नरसिंहराव के सिद्धान्तों को चुनौती दी । उनके मत में नरसिंहराव का अभिगम पुराना था । परन्तु इससे भाषाविज्ञान के क्षेत्र में उनके आरम्भिक कार्य का महत्त्व किसी भी दृष्टि से कम नहीं होता है । उनके सतत प्रयास काफ़ी फलदायी रहे और वे भविष्य के विकास में सहायक बने । फिर भी, जैसा कि **रोजनीशी** के सम्पादकों ने कहा है कि किसी भी विधि मंत्र के आधार के बिना नरसिंहराव द्वारा प्रतिपादित किए गए सिद्धान्त जो आज भी अपनाए जाते हैं, उनके स्थान पर किसी ने नए सिद्धान्त प्रतिपादित नहीं किए हैं । अपनी सीमाओं के बावजूद, हक़ीक़त यह है कि गुजराती के भाषाविज्ञान को उन्होंने एक सुदृढ़ और वैज्ञानिक अवस्थान पर लाकर रख दिया । भाषाशास्त्र के विद्वानों पर उनका बड़ा ऋण है ।

6

उपसंहार

अनेक क्षेत्रों में अपने आरम्भिक कार्य द्वारा नरसिंहराव ने गुजराती साहित्य को समृद्ध किया । परन्तु ऐसी बहुमुखी प्रतिभा के बावजूद नरसिंहराव प्रधानतः कवि थे । उनके सृजन द्वारा गुजराती कविता परिष्कृत हुई । जिन कारकों से प्रभावित होकर उन्होंने कविता के प्रति अपना अभिगम अपनाया, उनमें अंग्रेज़ी की रोमांटिक कविता और संस्कृत साहित्य का अध्ययन महत्त्वपूर्ण है । स्वयं उन्होंने ही कहा था कि पश्चिम की पद्धति का अनुकरण करते हुए अपनी ही भाषा में कविता लिखने का और गुजराती कविता के उस दिशा में आगे बढ़ाने का उनका उद्देश्य था । इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने यह सतत प्रयास किया कि अपनी कविता की भाषा विशुद्ध हो, उसमें भावों की गहराई हो, छन्दरचना लयबद्ध हो । उन्होंने विविध प्रकार के प्रगीतों की रचना करने का प्रयास किया और उनका यह प्रयास काफ़ी सफल रहा । आह्वान चतुष्टयी से लेकर शोकगीत तक अन्य प्रकार की कविता लिखने का भी उन्होंने प्रयास किया । परन्तु ऐसा लगता है कि सोनेट में उनकी कोई विशेष रुचि नहीं थी । 'वीणानुं अणुरणन' (वीणा का अनुरणन) के अपवाद से उनके और किसी सोनेट के बारे में जानकारी नहीं है । 'वीणानुं अनुरणन' सोनेट **हृदयवीणा** में है । सोनेट में रुचि न होने पर भी उन्होंने एक काव्य-प्रकार के रूप में सोनेट को महत्त्व तो अवश्य दिया था ।

यह भी कहा जा सकता है कि चूंकि नरसिंहराव कवि थे, इसीलिए उन्होंने सृजनात्मक गद्य भी लिखा था । **विवर्तलीला** द्वारा उन्होंने गुजराती भाषा को निबन्ध की विधा प्रदान की । उनके निबन्धों में सजीवता और साथ ही चिंतन का गाम्भीर्य भी है । **स्मरणमुकुर** द्वारा गुजरात में पहली बार विश्वसनीय और रेखाचित्र लिखने की कला का भी विकास हुआ ।

कविता, सौन्दर्य तथा कला के प्रति उनका प्रेम उनकी साहित्य-समीक्षा का स्रोत था । **मनोमुकुर** के चार ग्रन्थों में उनके समीक्षात्मक लेखों के बृहत संकलन में यह पूर्णरूपेण सिद्ध होता है । सूक्ष्म भेद करने की उनकी क्षमता, उनका पुण्य प्रकोप, सबको आनन्दित करने की उनकी तत्परता और साहित्यिक गुणवत्ता के विषय में उनकी चिंता उनके इन लेखों में प्रतिबिम्बित होते हैं ।

उनके समीक्षात्मक लेखों का क्षेत्र भी अत्यन्त व्यापक है । आरम्भ के चरणों से

लेकर गांधी युग तक के गुजराती साहित्य का उन्होंने सर्वेक्षण किया है । एक समीक्षक और सृजनात्मक लेखक के नाते वे अपने अंतिम क्षणों तक सावधान और जागृत रहे ।

यदि गुजराती कविता को उन्होंने परिष्कृत किया तो गुजराती गद्य को भी उन्होंने बहुत हद तक विकसित किया । परन्तु उन्होंने यह तो कभी नहीं माना कि वे अद्वितीय थे । उनका एक प्रशंसक जब उनके गद्य की सराहना करने लगा तो उन्होंने अपने से कहीं अधिक सक्षम गद्य लेखक आचार्य आनन्दशंकर ध्रुव का उल्लेख किया ।

नरसिंहराव के परिचय में जाने वाले सभी लोगों को यह प्रतीति हो चुकी थी कि उनकी धर्मभावना अत्यन्त गहरी थी, उनकी ईश्वरप्रीति निश्चल थी और उनकी सत्यनिष्ठा अडिग थी । जब कहीं दम्भ का आभास भी मिले तो उस चीज़ को वे तुरंत ही ठुकरा देते थे । उनके लेखन में उनके स्वाभाविक लक्षण दिखाई देते हैं और उनकी **रोजनीशी** से उनके अंतर्मन की छबि उभर आती है । नरसिंहराव निस्सन्देह अपने समय के एक प्रतिष्ठित व्यक्ति थे जिनकी जीवन दृष्टि अत्यन्त विशाल थी । क्या साहित्य में और क्या जीवन में, 'विशुद्धि' उनके लिए एक संकेत-शब्द था । अनेक दिशाओं से प्रेरणा ढूंढ़ने वाले इस प्रतिभाशाली पुरुष ने किस हद तक अन्य लोगों को प्रेरित किया था, इसका अन्दाज़ा लगाना शायद ही सम्भव है । स्वयं अपने व्यक्तित्व में जो दीप्ति थी, उसीको गुजरात के साहित्यिक जीवन में उन्होंने सम्प्रेषित किया था ।

यदि आधुनिक गुजराती कविता का प्रणेता नर्मद शौर्य को लेकर चलने वाले पुरुष थे तो नरसिंहराव गर्भित साहस रखनेवाले गम्भीर पुरुष थे जिन्होंने गुजराती कविता को सुन्दरता, सौन्दर्य दृष्टि की भावना, शुद्धता और चिंतनात्मक विषय वस्तु प्रदान किए । उनका और उनके सतत तपोमय दीर्घ साहित्यिक जीवन को गुजरात सुयोग्य गौरव के साथ देखा है और साहित्य का अनुशीलन करने वाली भावी पीढ़ियाँ भी यही करती रहेंगी ।

परिशिष्ट - 1

वाद्यनाश

(नरसिंहराव के निधन के समय लेखक द्वारा भावांजलि)

वह था वादक, उन्मत्त चन्दा को देख,
पीता चन्द्रधवल विश्व का हर्ष,
करता स्वर्गंगा के जल में स्नान,
अनगिनत तारकों की उछालता गेंद ।
मूक संगीत की लहरें
लहरातीं जो ब्रह्मांड में,
उन सुरों को आत्मवाद्य में
कर प्रतिध्वनित मन्द मधुर छटा से
उल्लसित होता था वह ।

घूमा वादक अनेक उद्यानों में,
हर बेल में देखे उसने विलास,
हर पुष्प की सौरभ से हुआ प्रसन्न ।
पिरोई अनमोल फूलों की माला,
फैलाया भली भांति फूलों का परिमल ।

चला वादक शांत उद्यान छोड़,
सुना उसने दूर का निगूढ़ स्वर,
सुनी ध्वनि शांत निर्झरों की,
सुने वादियों के अनवरत गरजते शब्द ।
सुना धुआंधार का धीर-प्रशांत घोष,
देखे दूरस्थ उत्तुंग गिरिशृंग
गहन महावाद्य के कांपे सुप्त सुर ।

चला वादक छोड़ उल्लास शांत,
सुनी उसने किसी वनों की पुकार,
पथ-पथ पर पाए गहरे गर्त,
गरजे कैसे विकट पथ में वायु घोर उन्मत्त
देखा विषम तमिस्र जो था व्याप्त, ओत-प्रोत,
पाई दिव्य जम्बु ज्योत, जगमगाई जो युगों तक ।

घेरे हैं दृष्टि को विस्तृत पहाड़,
जगाए भीति पर्वतों की कगार,
उठे दिग्दिगंत से पाशवी स्वर,
छाए भयानक मेघ शीर्ष उत्तुंग
मेघ-विद्युत्का खेले तांडव खेल
चलता रहा इस बीच दृढ़ पद से अकेला एक वीर ।

चला वीर वह, धीर और प्रशांत,
ला अन्धकार में उन्नत शीर्ष,
दृढ़ समर्थ श्रद्धा से खेले द्वन्द्व
खेले उस कर्मनिष्ठ ने कौशल से युद्ध,
संगी उसका था केवल एक वाद्य ।
विलसित महाज्योति का वह गाए मृदु गान ।

सूर्य रश्मि के देखे उसने प्रभाव,
व्योम की उसने देखी वितान,
देखी स्थिर आंखों से इन्द्रधनुष की कमान
जगे उसके उन्मत्त हुलास
भरने के उन रंगों को जीवन में ।
लगाई कितनी कल्पना की दौड़ ।

उठे हृदय में कितने ही तरंग
बुद्धि-सौदामिनी से थे जो उद्दीप्त,
उठे असंख्य अदृश्य विवर्त ।
देखने वह लीला हुआ उल्लसित 'ज्ञानबाल'
उस लीला के धीर गंम्भीर थे भाव,
थी लीला की ध्वनि गूढ़ और शांत,
समेटी जब लीला, तंत्री की हुई करुण झनकार ।

गाए नवगीत निरभ्र व्योम में,
उडुगण असंख्य करें नृत्य अनंत,
एकांत शांत सागर के किनारे
धुलकर अनंत के उत्सव में
सुनी नूपुर की झनकार कितनी ।
जगमगाई हृदय में कोई द्युति नवीन ।

अरे, कैसा विषम यह नवीन विकार !
कैसे ये सब अदृश्य प्रहार ?
टूट रहे हैं क्यों वाद्य के तार ?
क्यों ऐसे, अरे, विधि के विहार ?

कुसुम तो हो चुके हैं म्लान,
वीणा के टूट चुके हैं तार
नूपुर की झनकार भी
अब खोखली बनकर रही ।

होंगे ये शब्द किस के बींधे जो सान्ध्य शांति को ?
वाद्य क्या बजाता है वादक की वाणी आखिरी ?

फैली शांति प्रगाढ़ जग में,
झुका है चन्द्र व्योम में,
अदृश्य अनिल से उठी वाणी किसी की अनसुनी ।

अनेक उरवाद्यों के टूटे हैं सुभग तार,
नहीं डूबी हैं किन्तु शून्य में शेष झनकार ।
अवशिष्ट तन्तु का जो गूंजता है अखंड गान ।
मूक ध्वनि से उसके बहे कारुण्य सदा ।

अनेक रात्रियों में परम शांत एकांत में
उठे ध्वनि नए स्वयं गहन वाद्य में हृदय के
बने हृदय मूक ही इस समय के योग से
विराट इस शून्य में - अरव गान अब ना बहे ।

किन्तु क्या हृदय का वाद्य रुक गया है अचानक,
क्या रहा है शेष रचना करुण गान के ही स्वर में ?
था अवशिष्ट जो तन्तु, टूटा हुआ गूढ़ हस्त से
निगूढ़तर अश्रुस्रोत बह रहा है नयन से ?
'हस्त में आत्मवाद्य का हो जब सूक्ष्म संवादी तार
न हो कभी छिन्न वह, विश्व-वाद्य का गान'
सुनकर धीरता के शब्द, देखो वादक जो कहे :
'विश्व के इस सृजन श्रेणिबन्ध में
कोन मैं हूं, कहां विश्व का विराट गीत ?
कहां, अरे, यह मेरा तन्तु वाद्य ही ?
नहीं जानता मैं संगीत के महान स्वर
फैले हैं जो विराट समस्त विश्व में
तो कैसे पकड़ लूं उन्हें तन्तु वाद्य में मेरे
करूं प्राप्त मैं महाकाल-प्रभुत्व ?
मैं हूं मत्स्य तुच्छ महानन्द के जल में
कैसे पाकर उत्साह नवीन
अनन्त में झूम उठूं मैं शान्त ?

मैं तो मेरे वाद्य के टूटे तार से
उठ रही है जो अंतिम झनकार
और सुप्त है जो आत्मा के खण्डहरों में
उसी का करते स्मरण, जगता हूं मैं सुप्त-प्रसुप्त,
लिए हाथ में खोखला यह वाद्य
क्यों है मेरे हाथ मैं यह वाद्य ?

क्यों अब ? चाहे शीर्णविशीर्ण हो वाद्य
बना जो मिथ्या शीर्णविशीर्ण गान से
हो जाए भले ही वह शांत, बनकर मूक
महावादक के गर्जन सम समर्थ गान में

यही एक है चाह,
यही एक अभिलाषा
टूट-टूटकर शीर्ण विशीर्ण हो वाद्य
न हो इससे अस्त संगीत विराट ।

आह ! टूटा है वाद्य महान, डूबा है स्वर शांति में,
गरज रहे गौरवमय शब्द, घोर अनिल की भ्रांति में ।

- सुन्दरजी बेटाई
('इन्द्रधनु' से)

परिशिष्ट - 2

नरसिंहराव द्वारा रचित ग्रंथ

कविता :

कुसुममाला (1887)
हृदयवीणा (1866)
नूपुरझंकार (1914)
स्मरणसंहिता (1915)
बुद्धचरित (1934)

सर्जनात्मक गद्य :

विवर्तलीला (1932)
स्मरणमुकुर (1926)
नरसिंहरावनी रोजनीशी (1953)

समीक्षा :

मनोमुकुर - ग्रं. I (1924)
,, - ग्रंथ II
नरसिंहराव कविता विचार -
सं. मृगुराय अंजारिया (1969)
प्रेमानन्दनां नाटको

भाषाशास्त्र - शोधकार्य

परिशिष्ट - 3

संदर्भ

1. गुजराती साहित्यना वधु मार्गसूचक स्तम्भो - कृ. मो. झवेरी
2. अर्वाचीन कविता - सुन्दरम्
3. नरसिंहराव - एक अध्ययन - सुस्मिता मेढ
4. 'कुसुममाला'नो कवि - कुसुममाला संस्करण 8 - सुस्मिता मेढ
5. रोजनीशी जीवन परिचय - रामप्रसाद बक्षी
6. 'स्मरण संहिता'नो उपोद्घात अने टीका - आनन्दशंकर ध्रुव
7. कविता अने साहित्य - वा. 2 - रमणभाई नीलकंठ
8. आपणी कवितासमृद्धि - बलवन्तराय ठाकोर
9. कवितानो आस्वाद - सुरेश जोशी
10. विवेचना - विष्णुप्रसाद त्रिवेदी
11. अभिगम - थोड़ा विवेचन लेखो - मनसुखलाल झवेरी
12. साहित्य विमर्श - रामनारायण पाठक
13. आपणुं विवेचन साहित्य - हीराबहेन पाठक
14. सुवर्ण-मेघ - सुन्दरजी बेटाई
15. लिरिक अने लगरीक - चन्द्रवदन महेता
16. समीक्षा गंधाक्षत - अनन्तराय रावल
17. प्रतिशब्द समसंवेदन - उमाशंकर जोशी
18. साहित्य समीक्षा - विश्वनाथ भट्ट
19. गुजराती भाषा अने साहित्य (Wilson Philological Lectures)

इसके अतिरिक्त गुजराती साहित्य के इतिहास से सम्बन्धित भिन्न-भिन्न ग्रन्थ और कुछ लेख ।

116078
18/11/04

नरसिंहराव (1859-1937) गुजराती भाषा के साहित्य के भीष्म पितामह माने जाते हैं । कवि, समीक्षक, भाषाशास्त्री, अनुवादक आदि के रूप में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा । अपने मौलिक सृजन द्वारा उन्होंने गुजराती के साहित्य को आधुनिकता के मोड़ पर लाकर रख दिया ।

नरसिंहराव की कविता में गहरी संवेदना का स्पर्श हैं और प्रकृति के साथ मनुष्य को जोड़कर अपनी सृजनशीलता को उन्होंने विशिष्ट आयाम दिया है । मौलिक कविता के अतिरिक्त सृजनात्मक अनुवाद भी उनकी कविता की विशेषता है । दार्शनिक अभिगम उनकी कविता को गहनता प्रदान करता है ।

गद्य-लेखन द्वारा भी नरसिंहराव गुजराती के साहित्य में अपनी गहरी मुद्रा अंकित कर गए है । साहित्य-समीक्षा का क्षेत्र उनके लेखन द्वारा समृद्ध हुआ है । उसी प्रकार भाषाशास्त्र में भी उनके लेखन द्वारा गुजराती साहित्य को विशेष बल प्राप्त हुआ है ।

सुंदरजी बेटाई (1905-1989) गांधी युग गुजराती के अग्रिम कवियों में गिने जाते हैं । उन्होंने कविता में सृजन के र
में भी योगदान दिया । वे नरसिंहराव के विद्य
उन्हें अपने गुरु का समर्थन प्राप्त था । वे ब
युनिवर्सिटी के कोई तीस साल तक अध्यापव
अवकाश ग्रहण किया । उनके कई कविता-सं
के संग्रह प्रकाशित हैं ।

IIAS, Shimla
Library
H 891.470 92 N 168 S
00116078

Narsinghrao (Hindi), Rs. 15
ISBN 81-7201-272-1